

॥ ओ३म् ॥

सन्ध्या-प्रार्थना



ब्रह्मीभूत श्री १०८ श्रीस्वामी

परमानन्द जी महाराज

द्वारा उपदिष्ट



२२०० पुस्तकें श्रीमती कमलादेवी, धर्मपत्नी ला० ओंकार प्रसाद सराफ ने धर्मार्थ वितरण के लिए छपवाई ।

प्रकाशक:—

श्री भगवद्भक्ति आश्रम कुरुक्षेत्र (जींद)

ओ३म्

ओं भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि
धियो यो नः प्रचोदयात् ॥

ओं—सर्व व्यापक सबकी रक्षा करने वाले;

भूः—सत्य स्वरूप;

भुवः—चैतन्य स्वरूप, ज्ञान स्वरूप;

स्वः—सुख स्वरूप;

तत्—वह अनन्त परमात्मा;

सवितुः—सबको उत्पन्न करने वाले;

वरेण्यम्—ग्रहण करने योग्य, तारीफ के लायक;

भर्गो—सब पापों का भर्जन नाश करने वाले, शुद्ध तेजस्वरूप;

देवस्य—प्रकाश और आनन्द के देने वाले ऐसे परमात्मा का;

धीमहि—हम सब ध्यान करते हैं;

धियः—बुद्धियों को;

यः—वह परमात्मा;

नः—हमारी;

प्रचोदयात्— धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष में प्रेरणा करे, संसार से हटा-
कर अपने स्वरूप में लगावे और शुद्ध बुद्धि प्रदान करे ।

ओं यत्तेजः सवितुर्देवस्य वरेण्यं तदुपास्महे ।

तत्तेजोऽस्माकं बुद्धीः श्रेयस्करेषु नियोजयेत् ॥

हे तेजः पुञ्ज ज्योतिःस्वरूप परमात्मन् ! ज्ञान और आनन्द के देने वाले ! विजय कराने वाले ! प्रार्थना और स्तुति करने योग्य, सबको उत्पन्न करने वाले ! सबका संहार करने वाले ! सबकी रक्षा करने वाले ! सबको प्रेरणा करने वाले ! अनन्त अपार आनन्दस्वरूप ज्ञानस्वरूप परमात्मन् ! हम तुम्हारा ध्यान करते हैं । तुम्हारे गुण हममें प्रकट हों और हम तुमको प्राप्त हों । जो तुम हो सो ही हम हैं और जो हम हैं सो ही तुम हो । ऐसे ऐक्य-भाव से हम तुम्हारा ध्यान करते हैं । तुम हमारी बुद्धियों को पवित्र और धर्मार्थ, काम और मोक्ष में प्रेरणा करो । हममें तेरी सच्ची भक्ति और प्रेम प्रकट होवे । सबको हम अपना ही आत्मा समझें और हमारे शत्रु नाश को प्राप्त हों । भीतर काम, क्रोध इत्यादि और बाहर हमारी उन्नति में बाधक विघ्नकारक शत्रु सब नष्ट हों जिससे आनन्दपूर्वक हम

आपको प्राप्त हों । धन्यवादपूर्वक हमारी आपको अनन्तवार नम-
स्कार हो । हमारी रक्षा करो । एक मात्र आप ही हमारे रक्षक हो ।

॥ ओं शम् ॥

(इस मन्त्र को जो श्रद्धा भक्ति पूर्वक जपेगा उसे अवश्यमेव भग-
वान् के दर्शन होंगे, मोक्ष मिलेगी, कल्याण होगा, सब पापों का नाश
होगा, मनोकामना पूर्ण होगी । पुत्र के इच्छुक को पुत्र, धन चाहने
वाले को धन, रोगी को नीरोगता, विजय चाहने वाले को विजय
प्राप्त होगी, सिद्धि चाहने वाले को सिद्धि, ऋद्धि चाहने वाले को
ऋद्धि, विद्या चाहने वाले को विद्या, भक्ति चाहने वाले को भक्ति,
प्रेम चाहने वाले को प्रेम, और प्रेम का आश्रय परमात्मा प्राप्त हो
जावेगा, इसमें सन्देह नहीं !)

॥ आरती ॥

ओ३म् निरञ्जनं दुःख भञ्जनं ररंकार ओंकार ।

सत्य पुरुष सोऽहं तुही अलखं सर्वाधार ॥ दोहा

ओ३म् निरञ्जन ररंकार प्रभु, सोऽहं सत्य नाम करतार ।

अच्युत गुरु गोविन्द दातार, परमानन्द रूप निरधार ॥ टेक ॥

एक अखण्ड ज्ञान भण्डार, तुमरी ज्योतिका उजियार ।

मैं, मैं, मैं पन सर्वाधार, नेति नेति कर वेद उचार ॥१॥

राम आत्मा अपरम्भार, शकर ब्रह्म सर्वका सार ।

ओत प्रोत सबमें निरंकार, जीवन प्राण आप ओंकार ॥२॥

हरि नारायण अग्नि तार, देव देव मैं करहुं पुकार ।

कृष्णानन्ताऽचलहं गौड, हूँ फट अल्ला सर्व पसार ॥३॥

बिनवौं तुमको बारम्बार, प्रीतम प्यार करो उद्धार ।

तद्वन गणपति नैन मभार, होवे अनन्त तुम्हें नमस्कार ॥४॥

श्लोक-आनन्दमानन्दकरं प्रसन्नं, ज्ञानस्वरूपं निजबोधरूपं ।

योगीन्द्रसेव्यं भवरोगवैद्यं, श्रीमद्गुरु नित्यमहं नमामि ॥१॥

परं पराणां परमं पवित्रं, परेशमीशं सुरलोकनाथम् ।

सुरासुरैरर्चितपादपद्मं, सनातनं लोकगुरुं नमामि ॥२॥

त्वमेव माता च पिता त्वमेव, त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव ।

त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव, त्वमेव सर्वं मम देव देव ॥३॥

स्वराज्यसाम्राज्यविभूतिरेषा, भवत्कृपा श्रीमहिमः प्रसादात् ।

प्राप्ता मया श्रीगुरवे महात्मने, नमो नमस्तेऽस्तु पुनर्नमोस्तु ॥४॥

ब्रह्मानन्दं परमसुखदं केवलं ज्ञानमूर्तिम्

द्वन्द्वातीतं गगनसदृशं तत्त्वमस्यादि लक्ष्यम् ॥

एकं नित्यं विमलमचलं सर्वधीः साक्षिभूतम्

भावातीतं त्रिगुणरहितं सद्गुरुं तं नमामि ॥ ५॥

ममात्मा परमात्मा विश्वात्मा विश्वस्वरूप ।

ब्रह्मात्मा सर्वात्मा सूर्यात्मा ज्योतिस्वरूप ॥

अखण्डात्मा पूर्णात्मा ज्ञानात्मा ज्ञानस्वरूप ।

सुखात्मा चिदात्मा सदात्मा सत्यस्वरूप ॥

भावात्मा भवात्मा शून्यात्मा शून्यस्वरूप ।

ज्ञातात्मा ज्ञेयात्मा ध्येयात्मा ध्यानस्वरूप ॥

ओं नमः शम्भवाय च मयो भवाय च । नमः शंकराय च
मयस्कराय च । नमः शिवाय च शिवतराय च ॥

ओं द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरो-
षधयः शान्तिः । वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्मा । शान्तिः
सर्वं शान्तिः शान्तिरेवशान्तिः । सामा शान्तिरेधि ॥

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

गुरु वन्दना ।

श्री गुरुं परमानन्दं वन्दे स्वानन्द विग्रहम् ।

यस्य सान्निध्यमात्रेण चिदानन्दायते तनुः ॥ १ ॥

गुरुब्रह्मा गुरुविष्णुर्गुरुर्देवो महेश्वरः ।

गुरुः साक्षात्परब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ २ ॥

अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया ।

चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ ३ ॥

यत्सत्येन जगत्सत्यं यत्प्रकाशेन भाति यत् ।

यदानन्देन नन्दन्ति तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ ४ ॥

अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम् ।

तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ ५ ॥

ध्यानमूलं गुरोर्मूर्तिः पूजामूलं गुरोः पदम् ।

मन्त्रमूलं गुरोर्वक्त्रं मोक्षमूलं गुरोः कृपा । ६ ॥

दोहा—भाव पात्र में अर्प कर सुन्दर जीवन फूल ।

सत्गुरु के अर्पण करो यही ज्ञान का मूल ॥

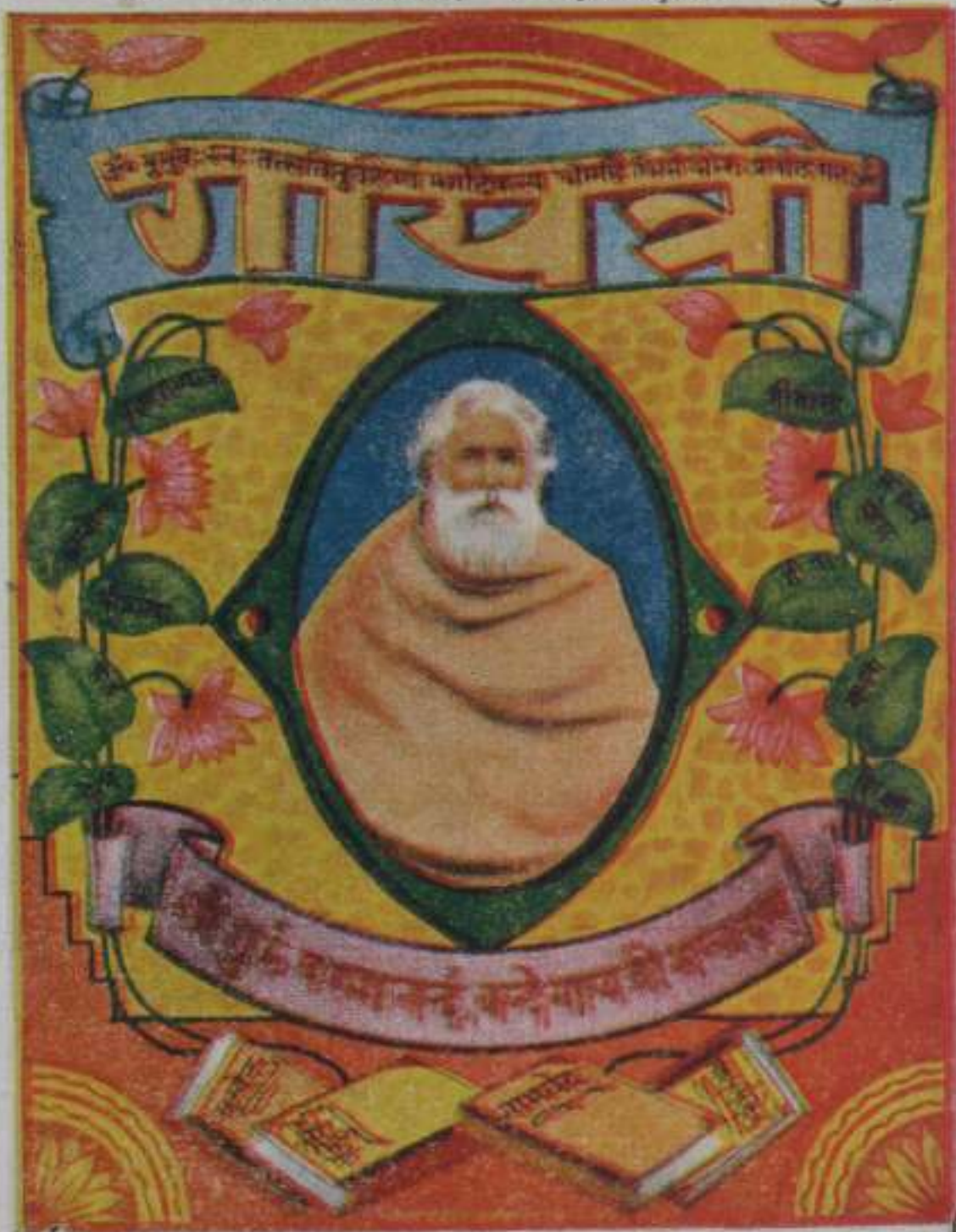
(८)

ज्योति

लहरा रही है ज्योति चिदानन्द की ।
चिदानन्द की परमानन्द की ॥
सब ब्रह्माण्डों के पृष्ठ भाग पर ।
सत्ता स्फूर्ति सबको दे रही है निजानन्द की ॥१॥
सारे विश्व के बाहर भीतर ।
हृदय कमल में सूर्य मण्डल में ॥
जगमगा रही है ज्योति महानन्द की ॥२॥
यह संसार असार है अन्तिम ।
एक ज्योति है अखण्डानन्द की ॥३॥
सूर्य चन्द्र विद्युत् और तारे ।
अग्नि ज्योति है भवानन्द की ॥४॥
ज्योति बिना कुछ और नहीं है ।
अहं ज्योति है ज्ञान यहाँ है ॥
अहं ब्रह्मास्मि ज्ञान की ज्योति ।
जग रही है घट घट परमानन्द की ॥५॥
ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥
★ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिःः ★

मुद्रकः—चरण प्रेस, शिकोहाबाद ।

श्रीगुरुं परमानन्दं वन्दे स्वानन्द विग्रहम् ।
यस्य सांनिध्यमात्रेण चिदानन्दायते तनुः ॥



महामन्त्र गायत्री

(संध्या, प्रार्थना, वन्दना, कीर्तन व आरती सहित)

दो शब्द

ब्रह्मीभूत श्री १०८ स्वामी परमानन्द जी महाराज, संस्थापक श्री भगवद्भक्ति आश्रम, रामपुरा, रेवाड़ी व जींद, जाखूपर धौलपुर हाऊस, शिमला में पधारे हुए थे। वहां सत्संग में बैठे हुए हिन्दू जाति के बड़े-बड़े नेताओं ने पूछा कि मनुष्यों का कल्याण किस प्रकार हो सकता है। आपने ध्यानस्थ होकर आदेश किया कि वेदजननी, कल्याणदायिनी शान्तिप्रदा गायत्री के प्रचार व जप से ही मानव जाति का कल्याण होगा। इसीलिए पृथ्वी गुरुदेव ने इस दिव्य सन्देश को छपवा कर डेढ़ लाख के लगभग बिना मूल्य वितरण करवाया। उनके निजरूप में लय होने के पश्चात् उनके आदेशानुसार उनकी पुण्य स्मृति में लाखों की संख्या में गायत्री वितरित होती रही। अपने भाव तथा श्रद्धानुसार इसका नियम पूर्वक शुद्धचित्त से जपने वालों के लिए यह गायत्री अमूल्य रत्न सिद्ध होगी। इसके अन्त में दी हुई श्री गुरुदेव कृत अद्भुत प्रार्थना तथा ज्योति स्वरूप पर ब्रह्म की आरती नित्य प्रति करने से आत्मा की प्रत्यक्ष उन्नति होगी। गाथा है भक्तजन श्रद्धा भक्ति पूर्वक प्रयोग में लाकर अपनी आत्मा का कल्याण करेंगे।

—संस्थापक

गायत्री मंत्र

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं

भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ॐ ॥

ओं=सर्वव्यापक, सबकी रक्षा करने वाले, भूः=सत्ता स्फूर्ति देने वाले सत्य स्वरूप, भुवः=सर्व दुःखों के नाशक, चैतन्य स्वरूप और ज्ञान स्वरूप, स्वः=सुख स्वरूप, सबको सुख देने वाले, तत्=वह अनन्त अपार परब्रह्म, सवितुः=सब जगत् के उत्पन्न करने वाले, प्रेरणा करने वाले, पवित्र करने वाले सविता देव, वरेण्यम्=भजनीय, उपासनीय, वर्णन करने योग्य, तारीफ के लायक, भर्गो=सब पापों के भर्जन नाश करने वाले शुद्ध तेजः स्वरूप, ज्योतिः स्वरूप परब्रह्म परमात्मा, देवस्य=ज्ञान, आनन्द और प्रकाश के देने वाले, दिव्य स्वरूप, परमात्मा का, धीमहि=हम सब ध्यान करते हैं, धियोः=बुद्धियों को, यः=वह परमात्मा नः=हमारी प्रचोदयात्=धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष में प्रेरणा करे । संसार से हटा कर अपने स्वरूप में लगावे और शुद्ध बुद्धि प्रदान करें ।

भावार्थ—हे सर्वव्यापक, सबकी रक्षा करने वाले, सत्ता-स्फूर्ति देने वाले, सत्य-स्वरूप, सब दुःखों के नाशक, चैतन्य-स्वरूप, ज्ञान-स्वरूप, सुख-स्वरूप सबको सुख देने वाले, अनन्त अपार, सब जगत् के उत्पन्न करने वाले, पवित्र करने वाले सविता देव, भजनीय, उपासनीय वर्णन करने योग्य, तारीफ के

लायक सब पापों को भर्जन नाश करने वाले, शुद्ध तेजः स्वरूप ज्योति-स्वरूप ज्ञान, आनन्द और प्रकाश के देने वाले दिव्य स्वरूप परमात्मा का हम सब ध्यान करते हैं। आप हमारी बुद्धियों को धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष में प्रेरणा करें। संसार से हटा कर अपने स्वरूप में लगावें और शुद्ध बुद्धि प्रदान करें।

गायत्री मन्त्र में १ ॐ, २ भूः, ३ भुवः, ४ स्वः, ५ तत्, ६ सवितुः, ७ वरेण्यम्, ८ भर्गो, ९ देवस्य यह नौ नाम हैं—इन ९ नामों में भगवान् की स्तुति की गई है। ६ नामों में स्तुति इस लिए की गई है कि इन नौ नामों में ही अनन्त नाम आ जाते हैं क्योंकि गिनती नौ तक ही है और आगे तो एक पर ही शून्य रख दिया जाता है। ‘धीमहि’ उपासना है। ‘धियो यो नः प्रचोदयात्’ यह प्रार्थना है। इसमें पाँच अवसान हैं “ॐ” यह प्रथम अवसान है, “भूभुवः स्वः” दूसरा “तत्सवितुर्वरेण्यम्” तीसरा, “भर्गो देवस्य धीमहि” चौथा, “धियो यो नः प्रचोदयात् ॐ” यह पाँचवां अवसान है। प्रत्येक अवसान पर मन्त्र जपते समय कुछ ठहर कर अर्थ चिन्तन करते हुए जप करना चाहिए।

गायत्री मन्त्र का सविता देवता है। अग्नि मुख है, विश्वामित्र ऋषि है, गायत्री छन्द है और उपनयन, प्राणायाम और जप में विनियोग (इस्तेमाल) है।

यह गायत्री मन्त्र आदि मन्त्र है। इस मन्त्र का स्वयं परमात्मा ने ब्रह्मादि ऋषि-मुनियों को उपदेश किया है। गायत्री

मन्त्र सब मन्त्रों में बड़ा है । मनुष्य ऐसा कल्याणकारी मन्त्र अब तक नहीं बना सका है । अन्य मतों की तो बात ही क्या है, वेद में भी इसके अतिरिक्त ऐसा कोई मन्त्र नहीं, जिसमें एक ही मन्त्र में भगवान् की स्तुति, उपासना और प्रार्थना तीनों बातें हों, भगवान् के भजन में पहले भगवान् की स्तुति की जाती है, फिर उपासना, ध्यान किया जाता है और पश्चात् भगवान् से प्रार्थना की जाती है, गायत्री मन्त्र में स्तुति, प्रार्थना और उपासना तीनों हैं । जिस जाति का एक मन्त्र नहीं है उसका संगठन नहीं हो सकता । सब मन्त्रों में गायत्री ही एक ऐसा मन्त्र है जो हिन्दू मात्र के लिए एक मन्त्र हो सकता है, भगवान् वेद में आज्ञा करते हैं कि “समानो मन्त्र” कि तुम्हारा मन्त्र एक हो अतः हिन्दू मात्र का एक गायत्री मन्त्र होना चाहिए ।

इस मन्त्र से प्रातः, मध्याह्न, सांयकाल और अर्ध रात्री के समय इस प्रकार चार बार संध्या करनी चाहिए । नौ नामों से भगवान् की स्तुति करे फिर “धीमहि” से भगवान् का इस प्रकार ध्यान करें ।

“योऽसावादित्ये पुरुषः सोऽसावहमस्मि ॐ स्वं ब्रह्म”

कि जो सूर्य में स्वर्ण जैसे रंग का प्रकाश स्वरूप पुरुष है, वह मैं हूँ । फिर “धियो यो नः प्रचोदयात्” से प्रार्थना करें । अर्थ सहित चाहे एक भी मन्त्र दिन में चार बार जपो वह भी कल्याण का देने वाला है । वेद का मन्त्र है; भगवान् की आज्ञा

है, इससे पाप नष्ट होते हैं और ज्ञान का प्रकाश होता है ।
उपनिषद् में यह भी कहा है ।

सायंप्रातः प्रयुञ्जानो अपापो भवति ।

निशीथे तुरीयसन्ध्यायां जप्त्वा वाक्सिद्धिर्भवति ॥

सायं प्रातःकाल जप करने वाला निष्पाप होता है । मध्य रात्रि में जप करने से वाक्सिद्धि प्राप्त होती है ।

सारभूतास्तु वेदानां गुह्योपनिषदो मताः ।

ताभ्यः सारस्तु गायत्री तिस्रो व्याहृतयस्तथा ॥

चारों वेदों का सार उपनिषद् है और उपनिषदों का सार गायत्री है ।

एवं यस्तु विजानाति गायत्रीं ब्राह्मणस्तु सः ।

अन्यथा शूद्रधर्मा स्याद् वेदानामपि पारगः ॥

इस प्रकार से जो गायत्री को जानता है वह ही ब्राह्मण है और जो नहीं जानता वह चार वेदों का पारगामी भी क्यों न हो शूद्र के सामान है—

या सन्ध्या सवै गायत्री द्विधा भूता व्यवस्थिता ।

सन्ध्या उपसिता येन विष्णुस्तेन उपासितः ॥

जो गायत्री है वही सन्ध्या है, और जो सन्ध्या है वही गायत्री है, जिसने गायत्री की उपासना कर ली उसने परमात्मा की उपासना कर ली ।

‘गायत्री प्रोच्यते तस्माद् गायन्तं त्रायते यतः ।’

इसका नाम गायत्री इसलिए है कि यह गाने वाले को संसार-सागर से पार कर देती है ।

गायत्री वेदजननी गायत्री पापनाशिनी ।

गायत्र्यस्तु परं नास्ति दिवि चेह च पावनम् ॥

गायत्री मन्त्र वेद की माता है, गायत्री मन्त्र पाप नष्ट करने वाला है । गायत्री मन्त्र के अतिरिक्त भूलोक तथा स्वर्गलोक में पवित्र करने वाला और मन्त्र नहीं है ।

मनु भगवान् ने कहा है कि विधि यज्ञ से जपयज्ञ दशगुणा फलदायक है, इसमें भी जिसमें होंठ ही हिले, शतगुणा और मानसिक सहस्रगुणा फल देता है । लेटा लेटा, बैठा बैठा, डोलता-फिरता जिस भी अवस्था में हो मनुष्य गायत्री का मानसिक जाप कर सकता है । इसके जपने में किसी प्रकार का भी दोष व विधि निषेध नहीं है पुण्य ही पुण्य है । इसके जपने से सब कामना पूरी होती हैं और अन्त में स्वर्ग और मोक्ष की प्राप्ति होती है ।

गायत्री का माहात्म्य

इस मन्त्र को जो श्रद्धा भक्ति पूर्वक जपेगा उसे अवश्यमेव भगवान के दर्शन होंगे, मोक्ष मिलेगी; कल्याण होगा, सब पापों का नाश होगा, मनोकामना पूरी होगी । पुत्र के इच्छुक को पुत्र, धन चाहने वाले को धन, रोगी को नीरोगता, विजय चाहने

वाले को विजय प्राप्त होगी, सिद्धि चाहने वाले को सिद्धि, ऋद्धि चाहने वाले को ऋद्धि, विद्या चाहने वाले को विद्या, भक्ति चाहने वाले को भक्ति, प्रेम चाहने वाले को प्रेम, और प्रेम का आश्रय परमात्मा प्राप्त हो जायगा इसमें संदेह नहीं ।

गायत्री भाष्य व सन्ध्या

यत्तेजः सवितुर्देवस्य वरेण्यं तदुपास्महे ।

तत्तेजोऽस्माकं बुद्धीः श्रेयस्करेषु नियोजयेत् ॥

हे तेज पुञ्ज ज्योतिस्वरूप परमात्मन् ! ज्ञान और आनन्द के देनेवाले ! विजय कराने वाले ! प्रार्थना और स्तुति करने योग्य, सबको उत्पन्न करने वाले ! सबका संहार करने वाले ! सब की रक्षा करने वाले ! सबको प्रेरणा करने वाले ! अनन्त, अपार आनन्द स्वरूप, ज्ञान स्वरूप परमात्मन् हम तुम्हारा ध्यान करते हैं । तुम्हारे गुण हम में प्रकट हों और हम तुमको प्राप्त हों । जो तुम हो सो ही हम हैं और जो हम हैं सो ही तुम हो । ऐसे ऐक्य भाव से हम तुम्हारा ध्यान करते हैं । तुम हमारी बुद्धियों को पवित्र और धर्मार्थ काम और मोक्ष में प्रेरणा करो । हम में तेरी सच्ची भक्ति और प्रेम प्रकट होवे, सबको हम अपना ही आत्मा समझें और हमारे शत्रु नाश को प्राप्त हों । भीतर काम क्रोध इत्यादि और बाहर हमारी उन्नति में बाधक, विघ्न-कारक शत्रु सब नष्ट हों । जिससे आनन्दपूर्वक हम आपको

प्राप्त हों, धन्यवादपूर्वक हमारा आपको अनन्त बार नमस्कार हो। हमारी रक्षा करो, एक मात्र आप ही हमारे रक्षक हो।

* प्रार्थना *

हे परमेश्वर ! परम पिता परमात्मन् ! आप हमारे संरक्षक और सहायक तथा प्रेरक हैं। हम सब मिल कर एक तुम्हारी ही भक्ति करें, तुम्हारे ही चरणों में श्रद्धा भक्तिपूर्वक शिर झुकाते रहें और एक मात्र तुम्हारी ही सहायता चाहें। अय हमारे आत्मा जगदीश्वर ! आप अनन्त क्षमा स्वरूप और दयालु हो। हे करुणासागर ! हम तुम्हें छोड़कर और किस की शरण लें। केवल एक मात्र तुम ही हमारे आधार और अधिष्ठान हो। हे हमारे सर्वस्व परमात्मन् ! हम तुम्हारे पवित्र चरणों को बारम्बार प्रणाम करने हैं। आप ही हमारी टेक हो और पत रखने वाले हो, प्रतिज्ञा पर आप ही दृढ़ता के स्थिति स्थापक हो। हे अनन्त अपार प्रकाश स्वरूप, पवित्र ज्योति परमात्मन् ! आप हमको श्रेयष्कर श्रेष्ठ मार्ग से अपनी प्राप्ति की ओर ले चलिए, आप ही हमारे सत्पथ प्रदर्शक नेता तथा संचालक हैं। हे अन्तर्यामिन् ! हम तेरे हैं, हमको अन्तर्यामी रूप से प्रेरणा करो कि हम तेरे उस मार्ग पर चलें जिस पर तेरे पूर्ण भक्त ऋषि महर्षि चले हैं और जिस मार्ग द्वारा तुमको प्राप्त हो चुके हैं। जिन पर तुम्हारा परम अनुग्रह तथा प्रसाद हुआ हो। और हे सर्व शक्तिमान हमारे प्रभु ! हमें उस मार्ग से कभी मत चलाओ जिस पर तेरे अभक्त चले हों, और तुम्हारी प्रसन्नता से हम कभी

वंचित न रहें। हे प्रभु ! तुम हमारे अन्तर्यामी प्रेरक सखा हो, हम तुम्हारी ही शरण हैं अतएव हमारी रक्षा करो। हे जगदीश्वर, जगदाधार ! हमको वह पवित्र दृढात्मिका बुद्धि प्रदान करो, कि जिसमें केवल एक मात्र तुम्हारा ही दृढ़ विश्वास तथा निश्चय हो। हमको वह अहंकार दो जिसमें हम अपना आपा तुमको कह सकें, मन में तुम्हारा शिव संकल्प उठे, चित्त में तुम्हारा ही चिन्तन रहे। हमारे नेत्र और हृदय खुले हों, और उन पर तुम्हारा पूरा अधिकार हो। हमारे सब के द्वारा केवल आपकी जय हो। आप हमारे जीवन के नियन्ता प्राण स्वरूप हो। हे स्वामिन् हमारी प्रत्येक क्रियायें और चेष्टायें आपके चरणों में समर्पण होवें। हमारे भाव महान् उदार तथा गम्भीर हों। हम सब प्राणीमात्र को अपना ही आत्मा स्वरूप देखें और सब की भलाई में अपनी भलाई समझें। अहर्निश परोपकार में रत रहें, और तुम्हारी ही भक्ति का सर्वत्र प्रचार करते हुए, अपने जीवन को सफल करते हुए, तुम्हारे पवित्र ज्योतिर्मय चरणों के समीप बैठने के योग्य बनें। हे पातितपावन ! दीनों के उद्धार करने वाले परमात्मन् ! हमको ऐसी उदार बुद्धि दीजिये कि जिससे हम दीन दुखियों की सहायता सच्चे हार्दिक भाव से करें। हमें तुम्हारे प्रेम में ही जीवन प्रिय हो। हे विश्वात्मा ! विश्वस्वरूप !! हम तुम्हारे भक्ति मार्ग पर चलते हुए महान् दुःखों को भी सानन्द सहन कर सकें, तुम्हारे भजन में दृढ़ रहें, सब के साथ पवित्र प्रेम करें। हे प्रेमाकर ! हम सब को अपना ही आत्मा जानें, हमारा

आचरण सबकी भलाई के लिए हो । हे अनन्त शक्ति परमात्मन् ! आपकी शक्तियें अपरिमित और वे अन्दाज हैं तुम्हारी दात से कोई बढ़ नहीं सकता है । तुम्हारी दक्षिणा ज्योति की तरह सब के ऊपर जगमगा रही है । तुम्हारी शक्तियों और सच्चे उदार वचनों, मेहरवानियों का कोई नियन्ता नहीं है । कोई नहीं कह सकता कि उसने मुझे नहीं दिया है । तुम्हारे द्वार से कोई निराश नहीं गया है । सब ने अभीष्ट फल प्राप्त कर जीवन का फल पाया है । हे राम कृष्णादि अनन्त नामों और रूपों के धारण करने वाले हमारे सच्चे प्रभु ! अन्त में हमारी यही प्रार्थना है, कि हम तेरे सच्चे भक्त बन, तेरी ही भक्ति का प्रचार करें, हम सब के द्वारा तुम्हारी ही इच्छा पूर्ण हो, सर्वत्र तुम्हारा ही राज्य हो । हे अनन्त अपार ज्ञानानन्द स्वरूप ! आपको हमारा अनन्त धन्यवाद हो और आपका हमको आशीर्वाद हो । अतएव सावजलिबद्ध आपको भूयोऽपि नमस्कारों पर नमस्कार है । ओ३म् शंकरोतु शंकरः ॥

दोहा—ओ३म् निरंजनं दुख भंजनं रंकार ओंकार ।

सत्य पुरुष सोऽहं तुही अलखं सर्वाधार ॥

ओ३म् निरंजन रंकार प्रभु सोऽहं सत्य नाम करतार ।

अच्युत गुरु गोविन्द दातार परमानन्द रूप निराधार ॥१॥

एक अखण्ड ज्ञान भण्डार तुमरी ज्योति का उजियार ।

मैं, मैं, मैं पन सर्वाधार नेति नेति कर वेद उधार ॥२॥

एक आत्मा अपरम्पार शंकर ब्रह्म सर्व का सार ।
 ओत प्रोत सब में निरंकार जीवन प्राण आप ओंकार ॥३॥
 हरि नारायण अग्नि तार देव देव मैं करहूँ पुकार ।
 कृष्णानन्ताऽचलहं गौड़ हूं फट अल्ला सर्व पसार ॥४॥
 बिनवो तुमको बारम्बार प्रीतम प्यारे करो उद्धार ।
 तद्वन गणपति नैनमम्भार होवे अनन्त तुम्हें नमस्कार ॥५॥
 आनन्दमानन्दकरं प्रसन्नं ज्ञानस्वरूपं निजबोधरूपम् ।
 योगीन्द्रसेव्यं भवरोगवैद्यं श्रीमद्गुरुं नित्यमहं नमामि ॥
 परं पराणां परमं पवित्रं परेशमीशं सुरलोकनाथम् ।
 सुरासुरैरचितपादपद्मं सनातनं लोकगुरुं नमामि ॥

त्वमेव माता च पिता त्वमेव त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव ।
 त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव त्वमेव सर्वं मम देव देव ॥
 स्वराज्यसाम्राज्यविभूतिरेषा भवत्कृपा श्रीमहिम प्रसादात् ।
 प्राप्ता मया श्रीगुरवे महात्मने नमो नमस्तेऽस्तु पुनर्नमोऽस्तु ॥

ब्रह्मानन्दं परमसुखदं केवलं ज्ञानमृतिम्
 द्वन्द्वातीतं गगनसदृशं तत्त्वमस्यादिलक्ष्यम् ।
 एकं नित्यं विमलमचलं सर्वधोसाक्षीभूतम्
 भावातीतं त्रिगुणरहितं सद्गुरुं तं नमामि ॥

ममात्मा परमात्मा विश्वात्मा विश्वस्वरूप
 ब्रह्मात्मा सर्वात्मा सूर्यात्मा ज्योति स्वरूप ।

अखण्डात्मा पूर्णात्मा ज्ञानात्मा ज्ञानस्वरूप
 सुखात्मा विदात्मा सदात्मा सत्यस्वरूप ॥
 भावात्मा भवात्मा शून्यात्मा शून्यस्वरूप
 ज्ञातात्मा ज्ञेयात्मा ध्येयात्मा ध्यानस्वरूप ।

ओं नमः शम्भवाय च मयोभवाय च । नमः शंकराय च
 मयस्कराय च । नमः शिवाय च शिवतराय च ॥

ओं द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः
 शान्तिरोषधयः शान्तिः वनस्पतयः शान्तिविश्वेदेवाः शान्तिब्रह्म
 शान्तिः सर्वं शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सामा शान्तिरेधि ॥

ओं शान्तिः शान्तिः शान्तिः ।

* गुरु-वंदना *

श्रीगुरुं परमानन्दं वन्दे स्वानन्दविग्रहम् ।
 यस्य सान्निध्यमात्रेण चिदानन्दायते तनुः ॥१॥
 गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः ।
 गुरुः साक्षात्परब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥२॥
 अज्ञानं तिमिरान्धस्य ज्ञानाब्जनशलाकया ।
 चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥३॥
 यत्सत्येन जगत्सत्यं यत्प्रकाशेन भाति यत् ।
 यदानन्देन नन्दन्ति तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥४॥
 अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम् ।
 तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥५॥

❀ कीर्तन-ध्वनि ❀

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं ।

भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ॐ ॥

गणपति दुर्गा रवि विष्णु शिव ॥

महामन्त्र है यह जपा कर जपा कर, हरिॐ तत्सत् हरिॐ तत्सत् ।

अक्का अल्ला अम्बा देवी, परमानन्द लहै तेरे सेवी ।

वाहि गुरु श्री वाहि गुरुजी, बे अन्त बे परवाह गुरुजी ।

दीन दयाल कृपाल गुरुजी, भगतन के रछपाल गुरुजी ॥

अलख अपार अनाम अगोचर, ज्योति स्वरूप अकाल पुरुष हर ।

सत्यनाम सोऽहं दुःख भंजन, ररंकार ओंकार निरंजन ॥

नमो नमो नित नमो नमो नित, नारायण चरणे नमो नमो नित ।

नारायण हरि ओं ओं, ओं ओं ओं ओं ॥

रघुपति राघव राजा राम, पतित पावन सीताराम ॥

राधाकृष्ण भज कुंज बिहारी, मुरलीधर गोवर्धनधारी ।

शंख चक्र पीताम्बरधारी, करुणा सागर कृष्ण मुरारी ॥

अच्युतं केशवं राम नारायणम्, कृष्ण दामोदरं वासुदेवं हरिम् ।

श्रीधरं माधवं गोपिका बल्लभम्, जानकी नायकं रामचन्द्रं भजे ॥

वं वं वं महादेव सदाशिव, हर हर हर महादेव सदाशिव ॥

गोविन्द जय जय गोपाल जय जय । राधा रमण हरि गोविन्द जय जय ॥

प्रकाशक : हरिराम शर्मा (महिमानन्द) 2C/12 रोहतक रोड,

नई दिल्ली—शक्तिदेवी ने १००० प्रतियाँ छपवाई—सं० २०२१

मुद्रक : कृष्ण प्रिंटिंग प्रेस, देहली ।

आरती

लहरा रही है ज्योति चिदानन्द की ।
 चिदानन्द की परमानन्द की ॥
 सकल ब्रह्माण्डों के पृष्ठ भाग पर ।
 सत्ता स्फूर्ति सबको दे रही है निजानन्द की ॥१॥
 सब ब्रह्माण्डों के बाहर भीतर ।
 हृदय कमल में सूर्य मण्डल में ॥
 जगमगा रही है ज्योति महानन्द की ॥२॥
 यह संसार असार है अन्तिम ।
 एक ही ज्योति है अखण्डानन्द की ॥३॥
 सूर्य चन्द्र विद्युत और तारे
 अग्नि ज्योति है भवानन्द की ॥४॥
 ज्योति विना कुछ और नहीं है ।
 अहं ज्योति है ज्ञान यही है ॥
 अहं ब्रह्मास्मि ज्ञान की ज्योति ।
 जग रही है घट घट परमानन्द की ॥५॥

— — —
 आश्रम से प्रकाशित पुस्तकें :—

- | | | |
|--------------------------|----------------------|---------------------------|
| १. सत्य शब्द संग्रह बड़ी | ५. वेदोपनिषद् | ६. सदाचार |
| २. शब्द संग्रह गुटका | ७. श्री परमानन्दामृत | |
| ३. सार संग्रह | ४. गीता | ८. भक्ति ज्ञान योग संग्रह |

आश्रम के उद्देश्य

- १—श्री भगवान की भक्ति का प्रचार करना ।
- २—गोरक्षा और उसके लिए गोचर भूमि छुड़वाना ।
- ३—वृक्ष लगवाना और उनके बीच में जलाशय बनवाना ।
- ४—शिक्षा का प्रचार करना जिसमें मनुष्यमात्र विद्या लाभ कर सकें और प्राचीन प्रथा को फिर प्रचलित करना ।
- ५—बीमारियों के अवसर पर दवाई बांटना ।
- ६—आसपास के ग्रामों में परस्पर के झगड़े और वैमनस्य मिटा शान्ति और प्रेम बढ़ाना ।
- ७—सब संस्थाओं में भगवद्भक्ति और धर्म का भाव जागृत करना ।
- ८—राजा और प्रजा सब ही का हित चिन्तन करना ।

मनुष्य मात्र के लिये साधारण नियम

१. मनुष्य का पहला कर्तव्य है कि सद्गुरु की शरण में जावे और उनकी कृपा सम्पादन करने के लिये शुद्ध चित्त से उनकी सेवा करे ।
२. उन सद्गुरु के वचनों पर दृढ़ विश्वास रखे ।
३. एक ही मत मार्ग का अनुसरण करे ।
४. साधु सज्जन का सत्संग करे । ५. विषयों के आधीन न हो ।
६. शत्रुओं को मित्र बनावे । ७. अधिक उपाधि न बढ़ावे ।
८. निरन्तर सारासार का विचार करता रहे ।
९. भूतमात्र पर दया रखे ।
१०. अहर्निश परमात्मा का ध्यान एवं उनपर दृढ़ आस्था रखे ।

ॐ तत्सत्

प्रार्थना व गायत्री

तथा

वैदिक सूक्त व प्रार्थना मंत्र

उपदेष्टा

ब्रह्मीभूत श्री १०८ स्वामी परमानन्द जी महाराज
संस्थापक, श्री भगवद्भक्ति आश्रम, रेवाड़ी व जींद

—०—

अर्पण करता हूं मैं तुमको,

तन मन धन सब अपना ।

तेरा तुझको अर्पण करके,

कहता जग में झूठा अपना ॥



श्री गोविन्दराम अग्रवाल, ४४१२ क्लोथ मार्केट, दिल्ली
ने यह पुस्तिका छपवाकर वितरण कराई ।

व्यास पूर्णिमा

संवत् २०२७

अमूल्य

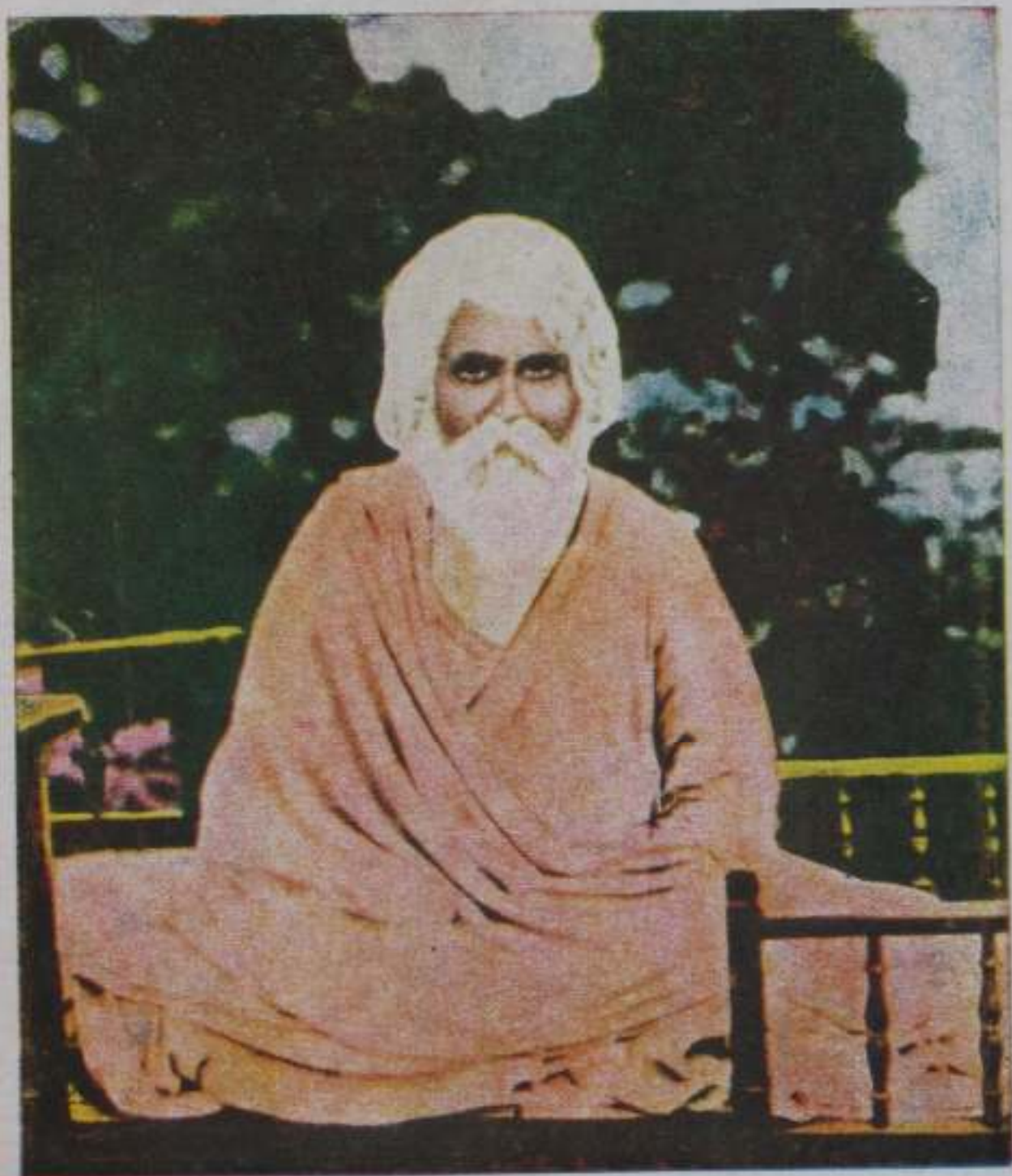
१०८ गायत्री जप

दो शब्द

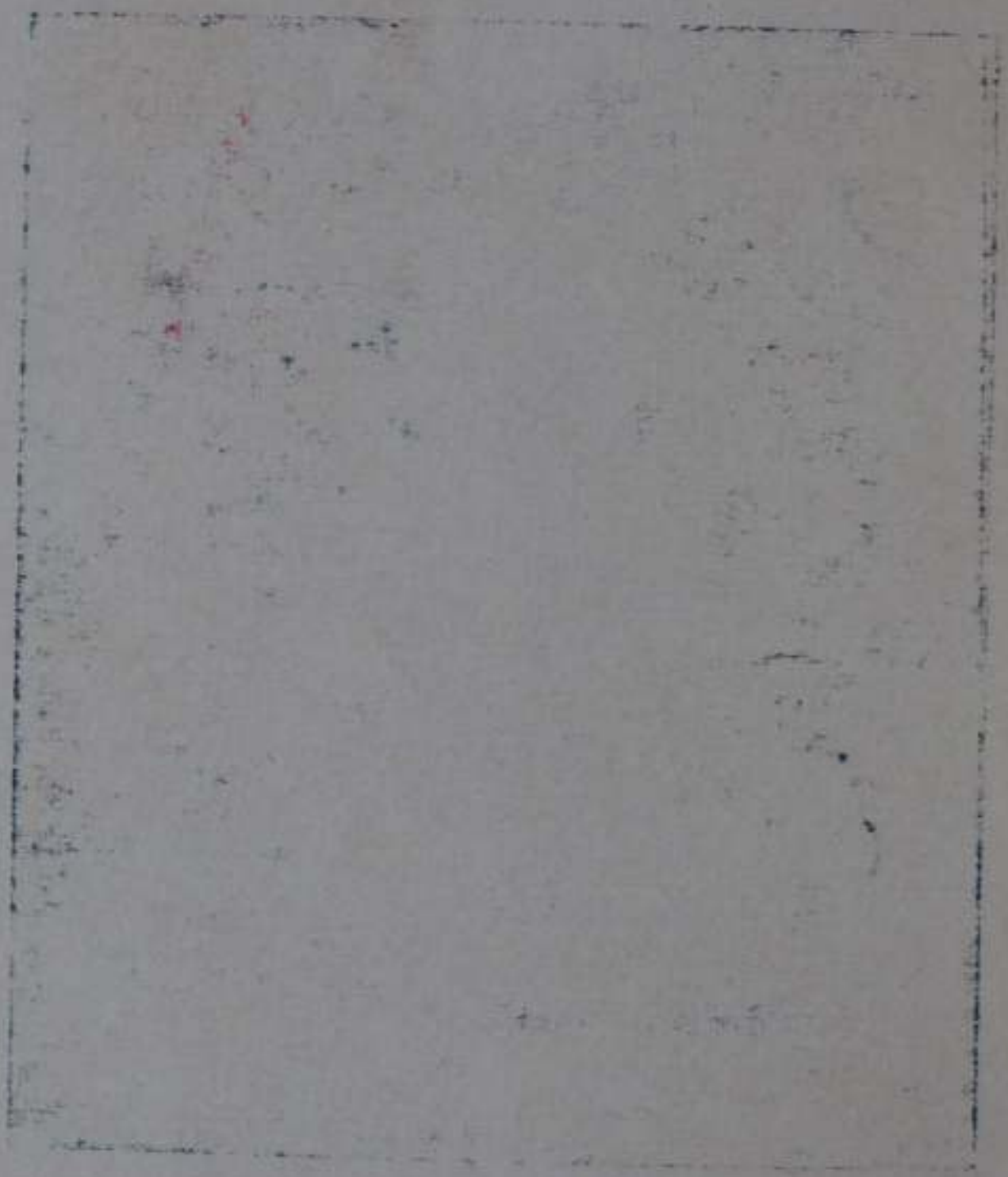
ब्रह्मीभूत श्री १०८ स्वामी परमानन्दजी महाराज, संस्थापक श्री भगवद्भक्ति आश्रम, रामपुरा रेवाड़ी, व जींद, जाखूपर धौलपुर हाउस, शिमला में पधारे हुए थे। वहां सत्संग में बैठे हुए हिन्दू जाति के बड़े-बड़े नेताओं ने पूछा कि मनुष्यों का कल्याण किस प्रकार हो सकता है। आपने ध्यानस्थ होकर आदेश किया कि वेदजननी, कल्याणदायिनी, शान्तिप्रदा गायत्री के प्रचार व जप से ही मानव जाति का कल्याण होगा। इसीलिए पूज्य स्वामीजी ने इस दिव्य सन्देश को लाखों की संख्या में छपवाकर बिना मूल्य वितरण करवाया। उनके निज रूप में लय होने के पश्चात् उनके आदेशानुसार उनकी पुण्य स्मृति में लाखों की संख्या में गायत्री वितरित होती रही। अपने भाव तथा श्रद्धानुसार इसका नियमपूर्वक शुद्ध चित्त से जपने वालों के लिए यह गायत्री अमूल्य रत्न सिद्ध होगी।

इसमें दी हुई श्री १०८ स्वामीजी कृत अद्भुत प्रार्थना तथा ज्योति-स्वरूप परब्रह्म की आरती नित्यप्रति करने से आत्मा की प्रत्यक्ष उन्नति होती है। भक्तजन श्रद्धा-भक्ति पूर्वक प्रयोग में लाकर अपनी आत्मा का कल्याण करें। वैदिक सूक्तों का तथा अधिकांश वेद-मन्त्रों का श्री १०८ महाराजजी का लिखवाया हिन्दी अनुवाद दिया है—वेद-मंत्र स्वतःसिद्ध माने गये हैं; अर्थ चिन्तन से ध्यान करते हुए पाठ मन्त्रानुरूप फल देते हैं।

श्रीगुरुं परमानन्दं वन्दे स्वानन्द विग्रहम् ।
यस्य सान्निध्यमात्रेण चिदानन्दायते तनुः ॥



ब्रह्मीभूत श्री १०८ स्वामी परमानन्द जी महाराज



ॐ

सत्य
स्वरूप
पर-ब्र
पवित्र
करने
वाले
आनन्द
हम स
हमारी
हटाकर
भ
वाले,
स्वरूप,
वाले,
योग्य,
तेज-स्वरूप
स्वरूप

ॐ तत्सत्

गायत्री मंत्र

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि ।

धियो यो नः प्रचोदयात् ॐ ॥

ओं=सर्वव्यापक, सबकी रक्षा करने वाले, भूः=सत्ता स्फूर्ति देनेवाले सत्य स्वरूप, भुवः=सर्व दुःखों के नाशक, चैतन्य स्वरूप और ज्ञान स्वरूप, स्वः=सुख स्वरूप, सबको सुख देने वाले, तत्=अनन्त अपार पर-ब्रह्म, सवितुः=सब जगत् के उत्पन्न करने वाले, प्रेरणा करने वाले, पवित्र करने वाले सविता देव, वरेण्यम्=भजनीय, उपासनीय, वर्णन करने योग्य, तारीफ के लायक, भर्गो=सब पापों के भर्जन नाश करने वाले शुद्ध तेज स्वरूप, ज्योति स्वरूप परब्रह्म परमात्मा, देवस्य=ज्ञान, आनन्द और प्रकाश के देने वाले, दिव्य स्वरूप, परमात्मा का, धीमहि=हम सब ध्यान करते हैं । धियः=बुद्धियों को, यः=वह परमात्मा, नः=हमारी, प्रचोदयात्=धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष में प्रेरणा करे ; संसार से हटाकर अपने स्वरूप में लगावे और शुद्ध बुद्धि प्रदान करे ।

भावार्थ— हे सर्वव्यापक, सबकी रक्षा करने वाले, सत्ता-स्फूर्ति देने वाले, सत्य-स्वरूप, सब दुःखों के नाशक, चैतन्य-स्वरूप, ज्ञान-स्वरूप, सुख-स्वरूप, सबको सुख देने वाले, अनन्त, अपार, सब जगत् के उत्पन्न करने वाले, पवित्र करने वाले, सविता देव, भजनीय, उपासनीय, वर्णन करने योग्य, तारीफ के लायक, सब पापों को भर्जन नाश करने वाले, शुद्ध, तेजःस्वरूप, ज्योति-स्वरूप, ज्ञान, आनन्द और प्रकाश के देने वाले, दिव्य-स्वरूप परमात्मा का हम सब ध्यान करते हैं । आप हमारी बुद्धियों को

धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष में प्रेरणा करें। संसार से हटाकर अपने स्वरूप में लगावें और शुद्ध बुद्धि प्रदान करें।

गायत्री मंत्र में १ ओ३म्, २ भूः, ३ भुवः, ४ स्वः, ५ तत्, ६ सवितुः, ७ वरेण्यम्, ८ भर्गो, ९ देवस्य—यह नौ नाम हैं। इन ९ नामों में भगवान् की स्तुति की गई है। 'धीमहि' उपासना है। 'धियो यो नः प्रचोदयात्' यह प्रार्थना है। इसमें पांच अवसान हैं—'ओ३म्' यह प्रथम अवसान है, 'भूर्भुवः स्वः' दूसरा, 'तत्सवितुर्वरेण्यम्' तीसरा, 'भर्गो देवस्य धीमहि' चौथा, 'धियो यो नः प्रचोदयात् ओ३म्' यह पांचवां अवसान है। प्रत्येक अवसान पर मंत्र जपते समय कुछ ठहरना चाहिए।

गायत्री मंत्र का सविता देवता है, अग्नि मुख है, विश्वामित्र ऋषि है, गायत्री छन्द है और उपनयन, प्राणायाम, और जप में विनियोग (इस्तेमाल) है।

यह गायत्री मंत्र आदि-मंत्र है। इस मंत्र का स्वयं परमात्मा ने ब्रह्मादि ऋषि-मुनियों को उपदेश किया है। गायत्री मंत्र सब मंत्रों में बड़ा है। अन्य मतों की तो बात ही क्या है, वेद में भी इसके अतिरिक्त ऐसा कोई मंत्र नहीं जिसमें एक ही मंत्र में भगवान् की स्तुति, उपासना और प्रार्थना तीनों बातें हों। भगवान् के भजन में पहले भगवान् की स्तुति की जाती है, फिर उपासना ध्यान किया जाता है और पश्चात् भगवान् से प्रार्थना की जाती है। गायत्री मंत्र में स्तुति, उपासना और प्रार्थना तीनों हैं। जिस जाति का एक मंत्र नहीं है, उसका संगठन नहीं हो सकता। सब मंत्रों में गायत्री ही एक ऐसा मंत्र है जो हिन्दू मात्र के लिए एक मंत्र हो सकता है। भगवान् वेद में आज्ञा करते हैं कि 'समानो मंत्रः', 'तुम्हारा मंत्र एक हो'। अतः हिन्दू मात्र का एक गायत्री मंत्र होना चाहिए।

इस मंत्र से प्रातः, मध्याह्न, सायंकाल और अर्ध रात्रि के समय इस प्रकार चार बार सन्ध्या करनी चाहिए। नौ नामों से भगवान् की स्तुति करे, फिर 'धीमहि' से भगवान् का इस प्रकार ध्यान करे—
 “योऽसावादित्ये पुरुषः सोऽसावहमस्मि ओ३म् खं ब्रह्म”—कि जो सूर्य में स्वर्ण जैसे रंग का प्रकाशस्वरूप पुरुष है वह मैं हूँ। फिर “धियो यो नः प्रचोदयात्” से प्रार्थना करे। अर्थ सहित चाहे एक भी मंत्र दिन में चार बार जपो वह भी कल्याण का देने वाला है। वेद का मंत्र है, भगवान् की आज्ञा है, इससे पाप नष्ट होते हैं और ज्ञान का प्रकाश होता है। उपनिषद् में यह भी कहा है—

सायं प्रातः प्रयुञ्जानो अपापो भवति ।

निशीथे तुरीयसन्ध्यायां जप्त्वा वाक्सिद्धिर्भवति ॥

सायं, प्रातःकाल जप करने वाला निष्पाप होता है। मध्य रात्रि में जप करने से वाक्-सिद्धि प्राप्त होती है।

सारभूतास्तु वेदानां गुह्योपनिषदो मताः ।

ताभ्यः सारस्तु गायत्री तिस्रो व्याहृतयस्तथा ॥

चारों वेदों का सार उपनिषद् हैं और उपनिषदों का सार गायत्री है।

एवं यस्तु विजानाति गायत्रीं ब्राह्मणस्तु सः ।

इस प्रकार से जो गायत्री को जानता है वह ही ब्राह्मण है।

या सन्ध्या सैव गायत्री द्विधा भूता व्यवस्थिता ।

सन्ध्या उपासिता येन विष्णुस्तेन उपासितः ॥

जो गायत्री है वही सन्ध्या है, और जो सन्ध्या है वही गायत्री है। जिसने गायत्री की उपासना कर ली उसने परमात्मा की उपासना कर ली।

‘गायत्री प्रोच्यते तस्माद् गायन्तं त्रायते यतः ।’

इसका नाम गायत्री इसलिए है कि यह गाने वाले को संसार-सागर से पार कर देती है ।

गायत्री वेदजननी गायत्री पापनाशिनी ।

गायत्र्यास्तु परं नास्ति दिवि चेह च पावनम् ॥

गायत्री मंत्र वेद की माता है, गायत्री मंत्र पाप नष्ट करने वाला है । गायत्री मंत्र के अतिरिक्त भूलोक तथा स्वर्गलोक में पवित्र करने वाला और मंत्र नहीं है ।

मनु भगवान् ने कहा है कि विधियज्ञ से जपयज्ञ दशगुणा फलदायक है, इसमें भी जिसमें होठ ही हिले शतगुणा और मानसिक सहस्रगुणा फल देता है । लेटा-लेटा, बैठा-बैठा, डोलता-फिरता जिस भी अवस्था में हो मनुष्य गायत्री का मानसिक जप कर सकता है । इसके जपने में किसी प्रकार का भी दोष व विधि निषेध नहीं है, पुण्य ही पुण्य है । इसके जपने से सब कामना पूरी होती है और अन्त में स्वर्ग और मोक्ष की प्राप्ति होती है ।

गायत्री का माहात्म्य

इस मंत्र को जो श्रद्धा-भक्तिपूर्वक जपेगा उसे अवश्यमेव भगवान् के दर्शन होंगे, मोक्ष मिलेगा, कल्याण होगा, सब पापों का नाश होगा, मनोकामना पूरी होगी । पुत्र के इच्छुक को पुत्र, धन चाहने वाले को धन, रोगी को नीरोगता, विजय चाहने वाले को विजय प्राप्त होगी; सिद्धि चाहने वाले को सिद्धि, ऋद्धि चाहने वाले को ऋद्धि, विद्या चाहने वाले को विद्या, भक्ति चाहने वाले को भक्ति, प्रेम चाहने वाले को प्रेम और प्रेम का आश्रय परमात्मा प्राप्त हो जायगा, इसमें सन्देह नहीं ।

शिवसंकल्प सूक्त

ओं यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवेति दूरङ्गमम् ।
 ज्योतिषां ज्योतिरेकन्तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥१॥
 ओं येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः ।
 यत्पूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥२॥
 ओं यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु ।
 यस्मान्न ऋते किञ्चन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसङ्कल्प-
 मस्तु ॥३॥

(श्री १०८ महाराजजी कृत हिन्दी अर्थ)

१. मेरा मन कल्याणकारी शुभ इच्छा वाला हो, जो जागृत अवस्था में दूर जाता है और स्वप्न अवस्था में उसी प्रकार लौट आता है, जो दिव्य है—दूर जाने के समर्थ है—और प्रकाश का अर्थात् इन्द्रियों का प्रकाशक है ।

२. मेरा मन शुभेच्छायुक्त हो—जिस मन से शुभ कर्म करने हारे बुद्धिमान्, विचारवान् पुरुष यज्ञ में और पाप से लड़ने में अच्छे कर्म करते हैं, जो अद्भुत है और देवता स्वरूप है और जो सब प्रजा के अन्दर विराजमान है ।

३. मेरा मन घर्मिष्ठ और हरिभक्त हो—जो मन ज्ञानस्वरूप, चेतन-स्वरूप और धैर्यस्वरूप है और जो प्राणधारियों में एक अमर निरन्तर ज्योति है और जिसके बिना कोई भी कार्य नहीं होता ।

ओं येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत्परिगृहीतममृतेन सर्वम् ।
येन यज्ञस्तायते सप्तहोता तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥४॥

ओं यस्मिन्नृचः साम यजूंषि यस्मिन्प्रतिष्ठिता रथना-
भाविवाराः । यस्मिन्निचत्तं सर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः
शिवसङ्कल्पमस्तु ॥५॥

ओं सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिन इव ।
हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥६॥

४. मेरा मन परमेश्वरपरायण हो—जिस अमरशील मन से यह सब भूत, भविष्यत्, वर्तमान जाना जाता है—और जिसके द्वारा सप्त-होता रूपी इन्द्रियों का यज्ञ होता है ।

५. मेरा मन दिव्य विचारयुक्त हो—जिस मन में ऋक्, साम, यजु और जिसमें अथर्व वेद इस प्रकार रखे हैं जैसे चक्र की नाभि में अरे संयुक्त होते हैं, और जिसमें प्रजा की सब वस्तुओं का ज्ञान ओतप्रोत है अर्थात् जिस-जिस प्रकार वस्त्र में तन्तुओं की संतति होती है उस प्रकार मन में ज्ञान प्रतिष्ठित है ।

६. जो मन कि मनुष्यों अर्थात् सब प्राणियों को इस प्रकार प्रेरता है, जैसे प्रवीण सारथि घोड़ों को चलाता है, तथा वागों से घोड़ों को रोकता है और जो मन हृदय में प्रतिष्ठित है और जो जरारहित और सबसे अधिक वेग वाला है—वह मेरा मन सच्चिदानन्द परमेश्वर के ध्यान में लगे व लीन हो ।

ॐ हिरण्यगर्भसूक्तम्

ॐ विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव । यद्भद्रं तन्न आसुव ॥

हे परमेश्वर, हे उत्पादक, सब बुराइयों को दूर कर । जो कुछ भलाई हो, वह हमें दे ।

ॐ हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् ।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥

हिरण्यगर्भ परमेश्वर, जिसकी सामर्थ्य में ज्योतिष्मान् लोक है, आदि से वर्तमान है । केवल वही सृष्टि का साक्षात् स्वामी है । वह पृथिवी-आकाश और इस दृश्यमान को धारण कर रहा है । हमें उस सुखस्वरूप परमेश्वर को भक्ति से पूजना चाहिए ।

ॐ य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः ।
यस्य छायाऽमृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥

हमें भक्ति से उस आनन्दस्वरूप परमेश्वर को पूजना चाहिए जो अध्यात्म विद्या का और बल का दाता है । जिसको सब लोग पूजते हैं और जिसकी आज्ञा विद्वान् लोग पालन करते हैं, जिसका प्रतिबिम्ब मोक्ष और जिसका प्रेषक (क्रोध) मृत्यु है ।

ॐ यः प्राणतो निमिषतो महित्वैक इद्राजा जगतो बभूव ।
य ईशे अस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥

भक्ति से हमें सुखस्वरूप परमेश्वर का ध्यान करना चाहिए, जो अपनी महिमा से प्राणी, जंगम, जड़ का एकमात्र राजा है, और जो दो पग और चार पग वालों पर राज्य करता है ।

ॐ येन द्यौरग्रा पृथिवी च दृढा येन स्वः स्तभितं येन नाकः ।
यो अन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥

हमें हृदय से आनन्दस्वरूप परमेश्वर का ध्यान करना चाहिए, जिसने गहन सूर्यलोक, दृढ़ पृथिवी और आल्हादक मोक्ष धाम को स्थापित किया है और जो आकाश में परमाणुओं को बनाता है ।

ॐ प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परिता बभूव ।
यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम् ।

हे प्रजापते ! तुझसे भिन्न इन उन सब उत्पन्नों को नहीं व्याप रहा (कोई दूसरा अध्यक्ष नहीं) । जो कामनाएं लेकर तेरी उपासना करें हमारी वह पूरी हों । हम धनैश्वर्यों के स्वामी हों ।

ॐ स नो बन्धुर्जनिता स विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा ।
यत्र देवा अमृतमानशानास्तृतीये धामन्नध्यैरयन्त ॥

वह हमारा बन्धु है, प्रादुर्भावित है (उत्पादक है), (सारे विश्व ब्रह्माण्ड का) वह विधाता है, वह समस्त धामों और भुवनों को जानता है (सबमें सर्वत्र रमा हुआ सदा सर्वदा सब कुछ जानता है, हमारा सुख-दुःख पाप-पुण्य कहीं कुछ छुपा नहीं है, उससे कोई कुछ छुपा नहीं सकता), जहां विद्वान् जन (जीवनमुक्त विदेह) अमृत आनन्दामृत पान करते हुए तीसरे धाम, तुर्या, सत धाम के ऊपर आनन्द धाम में विचरण किया करते हैं ।

ॐ अग्नेनय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान् ।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नम उक्ति विधेम ॥

हे दिव्यस्वरूप, प्रकाशस्वरूप विज्ञान धन से सुख के लिए धर्मानुकूल मार्ग से समस्त प्रशस्त ज्ञानों को प्राप्त कराइये । सबको जानने वाले आप हम लोगों से कुटिलता रूप पापाचरण को पृथक कीजिए । आपके सत्कार-पूर्वक प्रशंसा का सेवन करें ।

वैदिक प्रार्थना मन्त्र

(वेद मन्त्रों के पूर्ण अर्थ निकालना कठिन है । केवल भावमात्र समझने के लिए सामान्य अर्थ प्रस्तुत किये हैं । अर्थों में शंका होने पर विघ्न ही होता है । क्योंकि ये स्वयंसिद्ध होते हैं इसलिए वेद मन्त्रों का अनन्य श्रद्धा मात्र से पाठ करना ही फलीभूत होता है ।)

ॐ विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव । यद्भद्रं
तन्न आसुव ॥

हे परमेश्वर, हे उत्पादक, सब बुराइयों को दूर कर । जो कुछ भलाई हो, वह हमें दे ।

ॐ यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते तथा मामद्य मेधयाग्ने
मेधाविनं कुरु स्वाहा ॥

यजु० ३६-१४

हे प्रकाशस्वरूप प्रभु, जिस सात्त्विक बुद्धि को विद्वान् तथा रक्षक लोग प्राप्त होते हैं, उसी बुद्धि व धन से आज मुझे प्रशंसित बुद्धि वाला कीजिए । यह मेरी सत्य वाणी हो ।

ॐ द्विषो नो विश्वतो मुखाति नावेव पारय । अप नः
शोशुचदधम् ॥

ऋ. मं. १ सू. ६७

हे सर्वज्ञ (विश्वरूप, सर्वत्र मुख वाले) हमको शत्रुओं में से सर्वथा पार कर, जैसे नौका समुद्र पार कराती है । हमारे पाप दूर कर ।

ॐ दृते दृहमा मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम् ।
मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे । मित्रस्य चक्षुषा
समीक्षामहे ॥

यजु. अ. ३६-१८

हे दुःखविनाशक परमेश्वर, मुझको बड़ा करो । मुझको मित्र की आंख से सब प्रजा देखे । मैं मित्र की आंख से सब प्रजा को देखूं । मित्र की आंख से हम देखें, अर्थात् मित्र होवें ।

ॐ यतो यतः समीहसे ततो नोऽभयं कुरु । शं नः कुरु प्रजाभ्योऽभयं
नः पशुभ्यः ॥

जहां कहीं से भी तू चाहता है (अर्थात् भय देखता है) वहीं से हमें निर्भय कर दे । हमारी सन्तान के लिए (पुत्र पौत्रादिक के लिए) मंगलकारी हो । हमारे पशुओं के लिए अभय हो ।

ॐ ऋचं वाचं प्रपद्ये मनो यजुः प्रपद्ये साम प्राणं प्रपद्ये वागोजः
सहोजी मयि प्राणापानौ ॥

ऋग्वेद मेरी वाणी में वर्तमान हो (प्राप्त होवे), यजु मन में प्राप्त होवे । सामवेद प्राणों में प्राप्त होवे । वाणी तेजमयि हो । मेरे प्राण-अपान ओजसहित हों ।

ॐ यन्मे छिद्रं चक्षुषो हृदयस्य मनसो वाचि तृणं* बृहस्पतिमे
तदधातु । शं नो भवतु भुवनस्य यस्पतिः ॥ *(पाठ वृणं भी है)

जो मेरी आंख में दोष (कमी त्रुटि) है, हृदय में, मन में, वाणी में
बड़ा हुवा है उसको बृहस्पति समाधान व मेट दे । भुवनों का पति
बृहस्पति वह हमारे लिए कल्याणकारक हो ।

ॐ नमस्ते हर्षे शोचिषे नमस्तेऽस्त्वचिषे । अन्यांस्ते स्मत्तपन्तु
हेतयः पावको अस्मभ्यं शिवो भव ॥

हर्ष देने वाले अग्नि देवता के लिए नमस्कार हो, लटा वालों के
लिए नमस्कार हो । हमारा तेज अन्य (शत्रुओं) को तप्त करे । अग्नि
देवता हमारे लिए कल्याणकारी हो ।

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवाः भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः ।

स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳसस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः ॥

हे पूजने वाले विद्वान् मनुष्यों, स्तुति करने वाले हम कानों से शुभ
सुने, आंखों से शुभ देखें । दृढ़ अङ्गों से और शरीरों से जो आयु ईश्वर के
अर्थ हो उसे पावें ।

ॐ रुचं नो धेहि ब्राह्मणेषु रुचं राजसु नमस्कृधि । रुचं विश्वेषु
शूद्रेषु मयि धेहि रुचारुचम् ॥

हम ब्राह्मणों में प्रकाश भर दे, क्षत्रियों में प्रकाश भर दे, वैश्यों में
प्रकाश भर दे, शूद्रों में प्रकाश भर दे (तथा) मुझमें अत्यन्त तेजस्वी
प्रकाश भर दे ।

ॐ प्रियं मा कृणु देवेषु प्रियं राजसु मा कृणु । प्रियं सर्वस्य
पश्यत उत शूद्रे उतार्ये ॥

मुझे देवताओं में प्यारा बना दे, मुझे राजाओं में प्यारा बना दे, (मुझे) सब देखने वालों में, शूद्रों में और आर्यों में प्यारा बना दे ।

ॐ पिता नोऽसि पिता नो बोधि नमस्ते अस्तु मा मा हिंसीः ॥

य० अ० १-३७ मं० २०

आप हमारे पिता हैं (पाति रक्षतीति पिता), हमको यथार्थ ज्ञान हो, और आपके लिए हमारा अनन्त बार नमस्कार हो, हमको अपने वियोग के दुःख से अर्थात् जन्म-मरण के दुःख रूप चक्र से हिंसा मत करो ।

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनं । उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ॥

[यह स्वयंसिद्ध मृत्युञ्जय मंत्र है, इसमें अर्थ की अपेक्षा नहीं ।]

हम तीन नेत्रों वाले, अच्छी गंध वाले, पुष्टि को बढ़ाने वाले (रुद्र, शंकर भगवान्) की पूजा करते हैं । मैं आप अमृत द्वारा बन्धन मृत्यु से ऐसे छूट जाऊँ जैसे ककड़ी, खरबूजा किरने पर नाकू से अपने आप पृथक हो जाता है ।

ॐ तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्, पश्येम शरदः शतं, जीवेम शरदः शतं, शृणुयाम शरदः शतं, प्रब्रवाम शरदः शतम-दीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात् ॥

य० अ० ३६ मं० २४

वह जानियों का हितकारी चक्षु, ज्ञान नेत्र ही, शुद्ध पवित्र पहले से ही वर्तमान उदति है (उस प्रभु की कृपा से) हम सौ वर्ष तक देखें, सौ वर्ष तक जीयें, सौ वर्ष तक सुनें, सौ वर्ष तक प्रवचन करें, सौ वर्ष तक किसी के दीन न हों, और सौ वर्ष से अधिक आनन्द से रहें ।

ॐ तेजोऽसि तेजो मयि धेहि, वीर्यमसि वीर्यं मयि धेहि, बलमसि बलं मयि धेहि, ओजोऽस्योजो मयि धेहि, मन्युरसि मन्युं मयि धेहि, सहोऽसि सहो मयि धेहि ॥

तू तेज है, मुझमें तेज धारण कर (भर दे) । तू वीर्य है, मुझमें वीर्य धारण कर । तू बल है, मुझमें बल धारण कर । तू ओज है, मुझमें ओज धारण कर । तू मन्यु (उत्साह) है, मुझमें उत्साह धारण कर । तू शक्ति है, मुझमें शक्ति धारण कर ।

ॐ तनूपा अग्नेसि तन्वम्मेऽपाह्यायुर्दा अग्नेस्यायुर्मं देहि वर्चोदा अग्नेसि वर्चो मे देहि, अग्ने यन्मे तन्वा ऊनन्तन्म आपृण ॥

हे अग्ने ! तू शरीर की रक्षा करने वाला है, तू मेरे शरीर की रक्षा कर । हे अग्ने ! तू आयु को देने वाला है, तू मुझे आयु दे । हे अग्ने ! तू तेज को देने वाला है, तू मुझे तेज दे । हे अग्ने ! मेरे शरीर में जो भी कुछ कमी है तू उसे भर दे (पूरी कर दे) ।

ॐ अभयं नः करत्यन्तरिक्षमभयं द्यावापृथिवी उभे इमे । अभयं पश्चादभयं पुरस्तादुत्तरादधरादभयं नो अस्तु ॥ अ० १६-१५-५

अन्तरिक्ष हमारे लिए अभय करे । द्यौ और पृथिवी ये दोनों हमें अभय करें । पीछे अभय हो, सामने, ऊपर और नीचे हमारे लिए अभय हो ।

ॐ अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञातादभयं पुरोयः । अभयं नक्तमभयं दिवा नः सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु ॥

अ० १६-१५-६

मित्र से अभय हो, अमित्र से अभय हो, ज्ञात (विषय) से अभय हो, परोक्ष (विषय) से अभय हो, रात्रि अभय हो, दिन अभय हो, सब दिशाएँ मेरी मित्र हों ।

ॐ असतो मा सद् गमय तमसो मा ज्योतिर्गमय मृत्योर्मा
अमृतं गमयेति ॥

हे प्रभु ! असत्य से मुझे सत्य की ओर ले जा; अन्धकार से प्रकाश की ओर ले जा; तथा मृत्यु से अमरता की ओर ले जा ।

ॐ नमः शम्भवाय च मयो भवाय च नमः शंकराय च मयस्कराय
च नमः शिवाय च शिवतराय च ॥

शान्तिप्रद और सुखस्वरूप देव को नमन, कल्याणकारी और सुख-
कारी देव को नमन, मंगलमय और अधिकाधिक मंगलकारी देव को नमन ।

ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्ति-
रोषधयः शान्तिर्बनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः
सर्वं शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा सा शान्तिरेधि ॥

द्युलोक में शान्ति है, अन्तरिक्ष में शान्ति है, पृथिवी में शान्ति है,
जलों में शान्ति है, औषधियों में शान्ति है, बनस्पतियों में शान्ति है, सब
देवों में शान्ति है, ब्रह्म में शान्ति है, सबमें शान्ति है, शान्ति ही शान्ति
है, वही शान्ति मुझमें अधिकाधिक बढ़े ।

गायत्री-भाष्य व संध्या

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि ।
धियो यो नः प्रचोदयात् ॐ ॥

यत्तेजः सवितुर्देवस्य वरेण्यं तदुपास्महे ।

तत्तेजोऽस्माकं बुद्धोः श्रेयस्करेषु नियोजयेत् ॥

हे तेजपुञ्ज ज्योतिःस्वरूप परमात्मन् ! जान और आनन्द के देने वाले ! विजय कराने वाले ! प्रार्थना और स्तुति करने योग्य ! सबको उत्पन्न करने वाले ! सबका संहार करने वाले ! सबकी रक्षा करने वाले ! सबको प्रेरणा करने वाले ! अनन्त, अपार, आनन्दस्वरूप ! जानस्वरूप परमात्मन् ! हम तुम्हारा ध्यान करते हैं । तुम्हारे गुण हम में प्रकट हों और हम तुमको प्राप्त हों । जो तुम हो सो ही हम हैं और जो हम हैं सो ही तुम हो । ऐसे ऐक्य-भाव से हम तुम्हारा ध्यान करते हैं । तुम हमारी बुद्धियों को पवित्र तथा धर्मार्थ काम और मोक्ष में प्रेरणा करो । हम में तेरी सच्ची भक्ति और प्रेम प्रकट होवे, सबको हम अपना ही आत्मा समझें । हमारे शत्रु नाश को प्राप्त हों । भीतर काम-क्रोध इत्यादि और बाहर हमारी उन्नति में बाधक विघ्नकारक शत्रु सब नष्ट हों, जिससे आनन्दपूर्वक हम आपको प्राप्त हों । धन्यवाद-पूर्वक हमारा आपको अनन्त बार नमस्कार हो । हमारी रक्षा करो, एकमात्र आप ही हमारे रक्षक हो ।

प्रार्थना

हे परमेश्वर ! परमपिता परमात्मन् ! आप हमारे संरक्षक और सहायक तथा प्रेरक हैं । हम सब मिलकर एक तुम्हारी ही भक्ति करें, तुम्हारे ही चरणों में श्रद्धा-भक्ति पूर्वक सिर झुकाते रहें और एकमात्र तुम्हारी ही सहायता चाहें । अय हमारे आत्मा जगदीश्वर ! आप अनन्त क्षमास्वरूप और दयालु हो । हे करुणासागर ! हम तुम्हें छोड़कर और किस की शरण लें ? केवल एकमात्र तुम ही हमारे आधार और अधिष्ठान हो । हे हमारे सर्वस्व परमात्मन् ! हम तुम्हारे पवित्र चरणों को बारम्बार प्रणाम करते हैं । आप ही हमारी टेक हो और पत रखने वाले हो, प्रतिज्ञा पर आप ही दृढ़ता के स्थिति स्थापक हो । हे अनन्त अपार प्रकाशस्वरूप, पवित्र-ज्योति परमात्मन् ! आप हमको श्रेयस्कर श्रेष्ठ मार्ग से अपनी प्राप्ति की ओर ले चलिए, आप ही हमारे सत्पथ प्रदर्शक नेता तथा संचालक हैं । हे अन्तर्यामिन् ! हम तेरे हैं, हमको अन्तर्यामी रूप से प्रेरणा करो कि हम तेरे उस मार्ग पर चलें जिस पर तेरे पूर्ण भक्त ऋषि-महर्षि चले हैं और जिस मार्ग द्वारा तुमको प्राप्त हो चुके हैं, जिन पर तुम्हारा परम अनुग्रह तथा प्रसाद हुआ हो । और हे सर्वशक्तिमान् हमारे प्रभु ! हमें उस मार्ग से कभी मत चलाओ जिस पर तेरे अभक्त चले

हों, और तुम्हारी प्रसन्नता से हम कभी वंचित न रहें। हे प्रभु ! तुम हमारे अन्तर्यामी प्रेरक सखा हो। हम तुम्हारी ही शरण हैं, अतएव हमारी रक्षा करो। हे जगदीश्वर, जगदाधार ! हमको वह पवित्र दृढात्मिका बुद्धि प्रदान करो कि जिसमें केवल एकमात्र तुम्हारा ही दृढ़ विश्वास तथा निश्चय हो। हमको वह अहंकार दो जिसमें हम अपना आपा तुमको कह सकें, मन में तुम्हारा शिव-संकल्प उठे, चित्त में तुम्हारा ही चिन्तन रहे। हमारे नेत्र और हृदय खुले हों, और उन पर तुम्हारा पूरा अधिकार हो। हमारे सबके द्वारा केवल आपकी जय हो। आप हमारे जीवन के नियन्ता प्राणस्वरूप हो। हे स्वामिन् ! हमारी सब क्रियायें और चेष्टायें आपके चरणों में समर्पण होवें। हमारे भाव महान् उदार तथा गम्भीर हों। हम सब प्राणीमात्र को अपना ही आत्मात्मस्वरूप देखें और सबकी भलाई में अपनी भलाई समझें। अहर्निश परोपकार में रत रहें, और तुम्हारी ही भक्ति का सर्वत्र प्रचार करते हुए, अपने जीवन को सफल करते हुए, तुम्हारे पवित्र ज्योतिर्मय चरणों के समीप बैठने के योग्य बनें। हे पतिव्रतावन ! दीनों का उद्धार करने वाले परमात्मन् ! हमको ऐसी उदार बुद्धि दीजिये कि जिससे हम दीन-दुखियों की सहायता सच्चे हार्दिक भाव से करें। हमें तुम्हारे प्रेम में ही जीवन प्रिय हो। हे

विश्वात्मा ! विश्वस्वरूप ! हम तुम्हारे भक्ति-मार्ग पर चलते हुए महान् दुःखों को भी सानन्द सहन कर सकें, तुम्हारे भजन में दृढ़ रहें, सबके साथ पवित्र प्रेम करें । हे प्रेमाकार ! हम सबको अपना ही आत्मा जानें, हमारा आचरण सबकी भलाई के लिए हो । हे अनन्तशक्ति परमात्मन् ! आपकी शक्तियें अपरिमित और वेगन्दाज हैं, तुम्हारी दात से कोई बढ़ नहीं सकता है । तुम्हारी दक्षिणा ज्योति की तरह सबके ऊपर जगमगा रही है । तुम्हारी शक्तियों और सच्चे उदार वचनों, मेहरवानियों का कोई नियन्ता नहीं है । कोई नहीं कह सकता है कि उसने मुझे नहीं दिया है, तुम्हारे द्वार से कोई निराश नहीं गया है । सबने अभीष्ट फल प्राप्त कर जीवन का फल पाया है । हे राम, कृष्णादि अनन्त नामों और रूपों के धारण करने वाले हमारे सच्चे प्रभु ! अन्त में हमारी यही प्रार्थना है कि हम तेरे सच्चे भक्त बनें, तेरी ही भक्ति का प्रचार करें, हम सबके द्वारा तुम्हारी ही इच्छा पूर्ण हो, सर्वत्र तुम्हारा ही राज्य हो । हे अनन्त अपार ज्ञानानन्दस्वरूप ! आपको हमारा अनन्त धन्यवाद हो और आपका हमको आशीर्वाद हो । अतएव साञ्जलिवद्ध आपको भूयोऽपि नमस्कारों पर नमस्कार है । ओ३म् शं करोतु शंकरः ॥

दोहा — ओ३म् निरंजनं दुख भंजनं ररंकार ओंकार ।

सत्य पुरुष सोऽहं तुही अलखं सर्वाधार ॥

ओ३म् निरंजन ररंकार प्रभु सोऽहं सत्य नाम करतार ।

अच्युत गुरु गोविन्द दातार परमानन्द रूप निरधार ॥१॥

एक अखण्ड ज्ञान भण्डार तुमरी ज्योति का उजियार ।

मैं, मैं, मैं पन सर्वाधार नेति नेति कर वेद उचार ॥२॥

एक आत्मा अपरम्पार शंकर ब्रह्म सर्व का सार ।

ओत प्रोत सब में निरंकार जीवन प्राण आप ओंकार ॥३॥

हरि नारायण अग्नि तार देव देव में करहूं पुकार ।

कृष्णानन्ताऽचलहं गौड़ हुं फट अल्ला सर्व पसार ॥४॥

बिनवो तुमको बारम्बार प्रीतम प्यारे करो उद्धार ।

तद्वन गणपति नैनमभार होवे अनन्त तुम्हें नमस्कार ॥५॥

आनन्दमानन्दकरं प्रसन्नं ज्ञानस्वरूपं निजबोधरूपम् ।

योगीन्द्रसेव्यं भवरोगवैद्यं श्रीमद्गुरुं नित्यमहं नमामि ॥

परं पराणां परमं पवित्र परेशमीशं सुरलोकनाथम् ।

सुरासुरैरचितपादपद्मं सनातनं लोकगुरुं नमामि ॥

त्वमेव माता च पिता त्वमेव त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव ।

त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव त्वमेव सर्वं मम देव देव ॥

स्वराज्यसाम्राज्यविभूतिरेषा भवत्कृपाश्रीमहिमप्रसादात् ।

प्राप्ता मया श्रीगुरवे महात्मने नमो नमस्तेऽस्तु पुनर्नमोऽस्तु ॥

ब्रह्मानन्दं परमसुखदं केवलं ज्ञानमूर्तिम्
 द्वन्द्वातीतं गगनसदृशं तत्त्वमस्यादिलक्ष्यम् ।
 एकं नित्यं विमलमचलं सर्वधीसाक्षिभूतम्
 भावातीतं त्रिगुणरहितं सद्गुरुं तं नमामि ॥
 ममात्मा परमात्मा विश्वात्मा विश्वस्वरूप
 ब्रह्मात्मा सर्वात्मा सूर्यात्मा ज्योतिस्वरूप ।
 अखण्डात्मा पूर्णात्मा ज्ञानात्मा ज्ञानस्वरूप
 सुखात्मा चिदात्मा सदात्मा सत्यस्वरूप ॥
 भावात्मा भवात्मा शून्यात्मा शून्यस्वरूप
 ज्ञातात्मा ज्ञेयात्मा ध्येयात्मा ध्यानस्वरूप ।

ओं नमः शम्भवाय च मयोभवाय च । नमः शंकराय च
 मयस्कराय च । नमः शिवाय च शिवतराय च ॥

ओं द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः
 शान्तिरोषधयः शान्तिः वनस्पतयः शान्तिः विश्वेदेवाः
 शान्तिः ब्रह्म शान्तिः सर्वं शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सामा
 शान्तिरेधि ॥ ओं शान्ति शान्तिः शान्तिः ॥

गुरु-वंदना

श्रीगुरुं परमानन्दं वन्दे स्वानन्दविग्रहम् ।

यस्य सान्निध्यमात्रेण चिदानन्दायते तनुः ॥१॥

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः ।

गुरुः साक्षात्परब्रह्म तस्मै श्रीगुरुवे नमः ॥२॥

अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया ।
 चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरुवे नमः ॥३॥
 यत्सत्येन जगत्सत्यं यत्प्रकाशेन भाति यत् ।
 यदानन्देन नन्दन्ति तस्मै श्रीगुरुवे नमः ॥४॥
 अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम् ।
 तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरुवे नमः ॥५॥
 ध्यानमूलं गुरो मूर्तिः पूजामूलं गुरो पदम् ।
 मंत्रमूलं गुरो वाक्यं मोक्षमूलं गुरो कृपा ॥६॥

आरती

लहरा रही है ज्योति चिदानन्द की ।
 (चिदानन्द की परमानन्द की) ॥
 सब ब्रह्माण्डों के पृष्ठ भाग पर ।
 सत्ता स्फूर्ति सबको दे रही है निजानन्द की ॥१॥
 सारे विश्व के बाहर भीतर ।
 हृदय कमल में सूर्य मण्डल में,
 जगमगा रही है ज्योति महानन्द की ॥२॥
 यह संसार असार है अन्तिम ।
 एक ही ज्योति है अखण्डानन्द की ॥३॥

सूर्य चन्द्र विद्युत और तारे ।
 अग्नि ज्योति है भवानन्द की ॥४॥
 ज्योति बिना कुछ और नहीं है ।
 अहं ज्योति है ज्ञान यही है ॥
 अहं ब्रह्मास्मि ज्ञान की ज्योति ।
 जग रही है घट घट परमानन्द की ॥५॥

कीर्तन-ध्वनि

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यम्
 भर्गो देवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात् ॐ ॥१॥

महामंत्र है यह जपा कर जपा कर ।
 हरि ॐ तत्सत् हरि ॐ तत्सत् ॥२॥
 अल्ला अक्का अम्बा देवी ।
 परमानन्द लहै तेहि सेवी ॥३॥
 वाहि गुरु श्री वाहि गुरुजी ।
 वे - अन्त वे - परवाह गुरुजी ॥
 दीन दयाल कृपाल गुरुजी ।
 भगतन के रछपाल गुरुजी ॥४॥
 अलख अपार अनाम अगोचर ।
 ज्योति स्वरूप अकाल पुरुष हर ॥५॥

सत्यनाम सोऽहं दुःख भञ्जन ।
ररंकार ओंकार निरञ्जन ॥६॥

नमो नमो नित नमो नमो नित ।
नारायण चरणे नमो नमो नित ॥७॥

ओ३म् ओ३म् ओ३म् ओ३म् ।
नारायण हरि ओ३म् ओ३म् ॥८॥

रघुपति राघव राजा राम ।
पतित पावन सीताराम ॥९॥

राधाकृष्ण भज कुञ्ज विहारी ।
मुरलीधर गोवर्धनधारी ॥

शंख चक्र पीताम्बरधारी ।
करुणा सागर कृष्ण मुरारी ॥१०॥

अच्युतं केशवं राम नारायणम् ।
कृष्ण दामोदरं वासुदेवं हरिम् ॥

श्रीधरं माधवं गोपिका वल्लभम् ।
जानकी नायकं रामचन्द्रं भजे ॥११॥

गोविन्द गोविन्द हरे मुरारे ।
हर शिव शंकर भव त्रिपुरारे ॥१२॥

वं वं वं महादेव सदाशिव ।
हर हर हर महादेव सदाशिव ॥१३॥

गोपी प्रिय गोपीनाथ
 गोपी जन वल्लभ ॥१४॥
 श्रीकृष्ण चैतन्य प्रभु नित्यानन्दा ।
 हरे कृष्ण हरे राम श्री राधे गोविन्दा ॥१५॥
 जय रघुनन्दन जय सिया राम ।
 जानकी वल्लभ सीताराम ॥१६॥
 गणपति दुर्गा रवि विष्णु शिव ॥१७॥
 नन्दनन्दन घनश्याम श्री राधे राधे ।
 सीता के पति राम श्री रामा रामा ॥१८॥
 बोल हरि बोल हरि हरि बोल ।
 गोविन्द माधव मुकुन्द बोल ॥१९॥
 राधा रमण हरि गोविन्द जय जय ।
 गोविन्द जय जय गोपाल जय जय ॥२०॥

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णत्पूर्णमुदच्यते । पूर्णस्य पूर्णमादाय
पूर्णमेवावाशिष्यते । ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

ओ३म् वह परब्रह्म पूर्ण है और यह कार्यब्रह्म (जगत्) भी पूर्ण है ।
क्योंकि पूर्ण से पूर्ण की उत्पत्ति होती है । तथा (प्रलय काल में) पूर्ण
(कार्यब्रह्म) का पूर्णत्व लेकर (अपने में लीन करके) पूर्ण परब्रह्म ही बच
रहता है । त्रिविध ताप की शान्ति हो ।

ॐ सह नाववतु सह नौ भुनक्तु सह वीर्यं करवावहै ।

तेजस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहै ॥

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

वह परमात्मा हम (आचार्य और शिष्य) दोनों की साथ-साथ रक्षा
करें । हम दोनों का साथ-साथ पालन करें । हम साथ-साथ विद्या सम्बन्धी
सामर्थ्य प्राप्त करें । हम दोनों का पढ़ा हुआ तेजस्वी हो । हम द्वेष न
करें । त्रिविध ताप की शान्ति हो ।

ॐ सर्वं वै पूर्णं स्वाहा ॥

हे जगदीश्वर ! हम परोपकार के लिए जो यह कर्म करते हैं सो
आपकी कृपा से पूर्ण हो । यह कर्म आपको समर्पित है ।

आश्रम से मिलने वाली पुस्तकें

- | | |
|--------------------------|---------------------------|
| १. सत्य शब्द संग्रह बड़ी | ६. सदाचार |
| २. शब्द संग्रह गुटका | ७. श्री परमानन्दामृत |
| ३. सार संग्रह | ८. भक्ति ज्ञान योग संग्रह |
| ४. गीता | ९. गीतामंजरी |
| ५. वेदोपनिषद् | १०. परमानन्द भजनमाला |

श्रीमगवद्भक्ति आश्रम, रेवाड़ी व जींद के आश्रम के उद्देश्य

१. श्री भगवान् की भक्ति का प्रचार करना ।
२. गोरक्षा और उसके लिए गोचर भूमि छुड़वाना ।
३. जंगलों में वृक्ष लगवाना और उनके बीच में जलाशय बनवाना ।
४. शिक्षा का प्रचार करना जिससे मनुष्य मात्र विद्या लाभ कर सके, और प्राचीन प्रथा को फिर प्रचलित करना ।
५. बीमारियों के अवसर पर दवाई बांटना ।
६. आस-पास के ग्रामों में परस्पर के झगड़े और वैमनस्य मिटा, शान्ति और प्रेम बढ़ाना ।
७. सब संस्थाओं में भगवद्भक्ति और धर्म का भाव जागृत करना ।
८. राजा और प्रजा सब ही का हित चिन्तन करना ।

मनुष्यमात्र के लिए साधारण नियम

१. मनुष्य का पहला कर्तव्य है कि सद्गुरु की शरण में जावे और उनकी कृपा सम्पादन करने के लिए शुद्ध चित्त से उनकी सेवा करे ।
२. उन सद्गुरु के वचनों पर दृढ़ विश्वास रखे ।
३. एक ही मत मार्ग का अनुसरण करे ।
४. साधु सज्जन का सत्संग करे ।
५. विषयों के अधीन न हो ।
६. शत्रुओं को मित्र बनावे ।
७. अधिक उपाधि न बढ़ावे ।
८. निरन्तर सारासार का विचार करता रहे ।
९. भूतमात्र पर दया रखे ।
१०. अहर्निश परमात्मा का ध्यान करके उन पर दृढ़ आस्था रखे ।

मुद्रक : रायसीना प्रिंटरी, ४ चमेलियान रोड, दिल्ली-६

ॐ

कीर्तन-ध्वनि

(ब्रह्मनिष्ठ श्री १००८ स्वामी परमानन्द
जी महाराज के प्रिय कीर्तनों का संग्रह)

प्रकाशक—

श्री भगवद्भक्ति आश्रम,

जींद (कुरुक्षेत्र)

संख्या ११००

सं० २०२९

२
॥ ओ३म् ॥

१

गणपति दुर्गा रवि विष्णु शिव ॥

२

अल्ला अक्का अम्बा देवो ।
परमानन्द लहैं तेरे सेवी ॥

३

वाहि गुरुजी वाहो गुरुजी,
वे अन्त वे परवाह गुरुजी ।
दीन दयाल कृपाल गुरुजी,
भगतन के रछपाल गुरुजी ॥

३

४

बं बं बं महादेव सदाशिव ।

हर हर हर महादेव सदाशिव ॥

५

गौरी शंकर जयशिव जयशिव ।

जयशिव जयशिव जयशिव जयशिव ॥

६

अलख अपार अनाम अगोचर ।

ज्योति स्वरूप अकाल पुरुष हर ॥

७

सत्यनाम सोऽहं दुःखभञ्जन ।

ररंकार ओंकार निरञ्जन ॥

४

८

नारायण चरणी नमो नमो नित ।

६

राधा रमण हरिगोविन्द जय जय ।

गोविन्द जयजय गोपाल जयजय ॥

१०

राधाकृष्ण भज कुञ्जबिहारी ।

मुरलीधर गोवर्धनधारी ॥

शंख चक्र पीताम्बर धारी ।

करुणासागर कृष्ण मुरारी ॥

११

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे ।
हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्णकृष्ण हरे हरे

१२

गौरी शंकर सीताराम ।
राधे श्याम श्यामा श्याम ॥

१३

बोल हरि बोल हरि हरि बोल ।
गोविन्द माधव मुकुन्द बोल ॥

१४

राधे राधे गोविन्द बोलो रे ॥

६

१५

गोपी	प्रिय	गोपीनाथ ।
गोपी	जन	वल्लभ ॥

१६

जय नारायण जय गोविन्द हरे ।
जय नारायण जय गोपाल हरे ॥

१७

जय राधे जय राधे जय राधे ॥

१८

श्रीकृष्ण चैतन्य प्रभु नित्यानन्द ।
हरे कृष्ण हरे राम राधे गोविन्द ॥

७
१८

नारायण हरि ओं ओं ।
ओं ओं ओं ओं ओं ओं ॥

२०

नित्य बोलो राधे श्याम ।
हरे कृष्ण हरे राम ॥

२१

रघुपति राघव राजा राम ।
पतित पावन सीताराम ॥
जय रघुनन्दन जय सिया राम ।
जानकी बल्लभ सीता राम ॥

८
२२

अच्युतं केशवं रामनारायणम् ।
कृष्ण दामोदरं वासुदेवं हरिम् ॥
श्रीधरं माधवं गोपिका वल्लभम् ।
जानकी नायकं रामचन्द्रं भजे ॥

२३

केशव कृष्ण गोविन्द मुकुन्द ।
घट घट व्यापक आनन्द कन्द ॥

२४

गोविन्द गोविन्द हरे मुरारे ।
हर शिव शंकर भव त्रिपुरारे ॥

* प्रार्थना संग्रह *

प्रकाशक—

श्री भगवद् भक्ति आश्रम
जींद (कुरुक्षेत्र भूमि) हरियाणा



प्रथम बार

संवत्

मूल्य

११०० प्रतियां

२०३१

सदुपयोग

प्र

महर्षि प्राणि
। इयका प्राण्य
स्तिक, एव प्रात
वान श्रीकृष्णच
नयोग व्यवस्थि
नसिक तप, सर
भाव, प्राणियों
यता का अभा
र्थात सर्वत्र वैर
भाव, ये गुण क
पने आप को व
गुण कहे हैं ।

वहिले पक्ष
। पुरुषों के उर
नों के सत्सग स
मपूज्य भगवत्
क्त आश्रम, जो
दि स्वानों में
गा बहाई । उस
रणा से सहृदय
स्तुत है । यह
तल फुहारें
मन को शीत

हरि ओ तत्सत् ।

ओ गणेशाय नमः ।

श्रीगुरुचरणकमलैर्मयो नमः

प्राक्कथन (दो शब्द)

महर्षि पाणिनि ने अष्टाध्यायी में "अस्तिनास्तिदिष्टं मतिः" यह सूत्र कहा । इसका अर्थ यह है कि आत्मा तथा परलोक है, ऐसी मति वाला नास्तिक, एव आत्मा नहीं है ऐसी मतिवाला नास्तिक होता है । आनन्दकन्द भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र ने देवी सम्पत् के प्रभय, सत्वशुद्धि (घन्तःकरण शुद्धि) ज्ञानयोग व्यवस्थितिदान, दम मन का संयम) यज्ञ, स्वाध्याय, कृत्रिम वाचिक मानसिक तप, सरलता, प्रहिसा, सत्य, अक्रोध, त्याग, शान्ति, चुगली का अभाव, प्राणियों पर दया लालची न होना, मृदुता कोमलता, लज्जा, लिहाज चंचलता का अभाव, तेज, क्षमा, धैर्य, अन्दर बाहर की पवित्रता, अद्रोह (अर्थात् सर्वत्र वैर का अभाव, आत्मगौरव का होना, किन्तु अभिमान का सर्वथा अभाव, ये गुण कहे हैं । दम्भ पाखण्ड दर्प, नगदी का अभिमान, अभिमान (अपने आप को बहुत मानना) क्रोध कठोरता, अज्ञान, आदि आसुर सम्पत् के गुण कहे हैं ।

वहिले पक्ष के लिए अर्थात् देवी सम्पत् के लिए प्रार्थना की उपयोगित महापुरुषों के उद्देश से जानी जाती है । यह भक्तियोग का प्रधान गुण है । सन्तों के सत्संग से अहैतुकी भक्ति प्राप्ति होती है । प्रातः स्मरणीय श्री १०८ परमपूज्य भगवत्स्वरूप, श्री स्वामी परमानन्द जी महाराज ने भगवद् भक्ति आश्रम, जोन्द, रेवाड़ी, पालव नरेला, रेवाबास, चरखी दादरी, गढ़ी आदि स्थानों में बनवाए, तथा अहैतुकी कृपा से जनता जनार्दन के लिए भक्ति की गंगा बहाई । उसी का यह अमृत जल प्रार्थना संग्रह' उन्हीं सद्गुरुदेव की प्रेरणा से सहृदय पाठकों के कल्याण के लिए एक लघु पुस्तिका के रूप में प्रस्तुत है । यह गागर में सागर है । भावुक भक्तों के हृदयोदगारों की शीतल फुहारें हैं । आशा है प्रेमी जन इनका मननपूर्वक गान करके अपने तन मन को शीतल करके इस प्रेम परिश्रम को सफल करेंगे ।

शुभम् श्री सद्गुरुकृपया श्री सीताराम

अनुक्रमणिका

१-दो शब्द	१
२-वैदिक प्रार्थना मन्त्र	२
३-प्रार्थना-हे परमेश्वर !	३
४-गायत्री मन्त्र तथा व्याख्या	१०
५-भजन-ओ३म निरंजन	११
६-गुरु वन्दना	१२
७-दीनानाथ	१३
८-ईश्वर तू है सबका	१४
९-हे नाथ हे प्रभु !	१४
१०-भक्ति अपने पद कमल की	१५
११-पितु मात सहायक	१५
१२-हे प्रभो आनन्ददाता	१६
१३-दीनबन्धो हम सबों को ज्ञान भिक्षा दीजिए	१६
१४-हे जगन्नाता	१६
१५-हमारा प्यारा यह माश्रम	१७
१६-हे प्रेममय प्रभो	१७
१७-ईश्वर तुम्हीं दया करो	१८
१८-यज्ञरूप प्रभो हमारे	१८
१९-होता है सारे विश्व का कल्याण यज्ञ से	१९
२०-हे दयामय हम सबों को शुद्धताई दीजिए	२१
२१-परम पिता पुरख	२२

* प्रार्थना *

वैदिक-प्रार्थना-मन्त्राः

वेद-मन्त्रों के पूर्ण अर्थ निकालना कठिन है केवल भाव मात्र समझने के लिए सामान्य अर्थ प्रस्तुत किये हैं ।

१ ॐ विश्वानि देव सविनदुरितानि परासुव ।

यद् भद्रं तन्न आसुव ॥ यजु० अ० ३०, म० ३

हे परमेश्वर, हे उत्पादक, सब बुराईयों को दूर कर, जो कुछ भलाई हो वह हमें दे ।

२ ॐ यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते तथा मामद्य

मेधयागते मेधाविनं कुरु स्वाहा ॥ यजु० ३६-१४

हे प्रकाश स्वरूप प्रभो! जिस सात्विक बुद्धि को विद्वान् तथा रक्षक लोग प्राप्त होते हैं, उसी बुद्धि व धन से आज मुझे प्रशंसित बुद्धि वाला कीजिये । यह मेरी सत्य वाणी हो ।

३. ॐ द्विषो नो विश्वतो मुखानि नावेव पारय ।

अप नः शोशुचदधम् ॥ ऋ० म० १ सूत्र ६७

हे सर्वज्ञ (विश्वरूप, सर्वत्र मुख वाले) हमको शत्रुओं में से सर्वथा पार कर जैसे नौका समुद्र पार कराती है । हमारे पाप दूर कर ।

४. ॐ हते ह२हवा मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम् ।

मित्रस्यह चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षामहे ॥ यजु० ३६-१८

हे दुःख विनाशक परमेश्वर ! मुझको बड़ा करो । मित्र की आँख से मुझको सब प्रजा देखे । मैं मित्र की आँख से सब प्रजा को देखूँ । मित्र की आँख से हम देखें अर्थात् मित्र होवें ।

५. ॐ यतो यतः समीहसे ततो नोऽभयं कुरु ।

शं नः कुरु प्रजाम्योऽभयं नः पशुभ्यः ॥

जहाँ कहीं से भी तू चाहता है (अर्थात् भय देवता है) वहीं से हमें निभय (कर दे । हमारी सन्तान (पुत्र पौत्रादिक) के लिए मंगलकारी हो । हमारे पशुओं के लिए अभय हो ।

६- ॐ ऋचं वाचं प्रपद्ये मनो यजुः प्रपद्ये साम प्राणं प्रपद्ये

वागोजः सहोऽजी मयि प्राणापानौ ॥

ऋग्वेद मेरी वाणी में वर्तमान हो (प्राप्त होवे) यजु मन में प्राप्त होवे । सामवेद प्राणों में प्राप्त होवे । वाणी तेजमयी हो । मेरे प्राण अपान ओज सहित हों ।

७. ॐ यस्मे छिद्रं चक्षुषो हृदयस्य मनसो वाति तृणं

वृहस्पतिर्मे तदधातु । शं नो भवतु भुवनस्य यस्पतिः ॥

जो मेरी आँख में दोष (कमी चूटि) है, हृदय में मन में वाणी में बड़ा हुआ उसको वृहस्पति भेट दे । भुवनों का पति वृहस्पति हमारे लिए कल्याण कारक हो ।

८. ॐ नमस्ते हव्यं शोचिषे नमस्तेऽस्तवचिषे ।

अन्यांस्तेऽस्मत्पन्तु हेतयः पावको अस्मभ्यं शिवो भव ॥

हव्य देने वाले अग्नि देवता के लिए नमस्कार हो । हमारा तेज अन्य ऋषियों को तप्त कर । अग्नि देवता हमारे लिए कल्याण कारक हो ।

६. ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवाः भद्रं पश्येमाक्षिभिर्यजत्राः
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳसस्तनूभिर्व्यरोमहि देवहितां यदायुः । यजु २५-४१

हे पूजने वाले विद्वान् मनुष्यों, स्तुति करने वाले हम कानों से शुभ सुन ।
आँखों से शुभ देखें । हृद् मज्जाओं से और शरीरों से जो प्रायु ईश्वर के अर्थ
हो उसे पायें ॥

१०. ॐ रुचं नो धेहि ब्राह्मणेषु रुचं राजषु नस्कृधि ।
रुचं विश्वेषु शूद्रेषु मयि धेहि रुचारुचम् ॥

हम ब्राह्मणों में प्रकाश भर दे । क्षत्रियों में प्रकाश भर दे, वैश्यों में
प्रकाश भर दे, शूद्रों में प्रकाश भर दे (तथा) मुझ में अत्यन्त तेजस्वी प्रकाश
भर दे ॥

११. ॐ प्रियं मा कृणु देवेषु प्रियं राजसु मा कृणु ।
प्रियं सर्वस्य पश्यत उत शूद्रे उतार्ये ॥

मुझे देवताओं में प्यारा बना दे, मुझे राजाओं में प्यारा बना दे (मुझे)
सब देखने वालों में, शूद्रों में और आर्यों में प्यारा बना दे ।

१२. ॐ पिता नोऽसि पिता नो बोधि नमस्ते अस्तु मा माहितीः ॥

यजु० अ० १-३७ म०-२०

आप हमारे पिता हैं । (पाति रक्षति इति पिता) हमको यथार्थ जान हो
और आपके लिए हमारा अनन्त बार नमस्कार हो । हमको अपने वियोग के
दुख से अर्थात् जन्म मरण के दुख रूप चक्र से हिसा मत करो ॥

१३. ॐ इयं चक्रं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनं ।

उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ॥

हम तीन नेत्रों वाले, अच्छी गन्ध वाले पुष्टि को बढ़ाने वाले की पूजा
करते हैं । मैं आप अमृत द्वारा मृत्यु बन्धन से ऐसे छूट जाऊँ जैसे खरबूजा

ककड़ी पकने पर ताकू से अपने आप पृथक हो जाता है ।

१४. ॐ तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्, पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः
शतं, शृणुयाम शरदः शतं, प्रब्रवीम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं
भूयश्च शरदः शतात् ॥ यजु० ३६-२४

वह जानियों का हितकारी चक्षु ज्ञान नेत्र ही शुद्ध पवित्र पहिले से ही
वर्णमान उदित है (उस प्रभु की कृपा से) हम सौ वर्ष तक देखें सौ वर्षी तक
जीयें सौ वर्ष तक सुनें, सौ वर्ष तक प्रवचन करें, सौ वर्ष तक किसी से दीन
न हों और सौ वर्ष से अधिक आनन्द से रहें ।

१५. ॐ तेजोऽसि तेजो मयि धेहि वीर्यमसि वीर्यं मयि धेहि;
बलमसि बलं मयि धेहि, ओजोऽस्योजो मयि धेहि;
मन्युरसि मन्युं मयि धेहि, सहोऽसि सहो मयि धेहि ॥

तू तेज है मुझ में तेज धारण कर (भर दे) तू वीर्य है मुझ में वीर्य धारण
कर, तू बल है मुझ में बल धारण कर तू ओज है मुझ में ओज धारण कर
तू मन्यु है मुझ में उत्साह धारण कर । तू शक्ति है मुझ में शक्ति धारण कर

१६. ॐ तनून्पा अग्नेसि तन्वस्मेऽपाह्यायुर्वा अग्नेस्यायुर्मो देहि वर्चोदा
अग्नेसि वर्चो मे देहि, अग्ने यन्मे तन्वा ऊनन्तन्म आपृण ।

हे अग्ने ! तू शरीरों की रक्षा करने वाला है तू मेरे शरीर की रक्षा
कर । हे अग्ने ! तू आयु को देने वाला है तू मुझे आयु दे । हे अग्ने ! तू तेज
को देने वाला है, तू मुझे तेज दे । हे अग्ने ! मेरे शरीर में जो कुछ भी कमी
है उसे तू भर दे पूरी कर दे ।

१७. ॐ अभयं नः करत्यन्तरिक्षमभयं द्यावा पृथिवि उभे इमे ।

अभयं पश्चादभयं पुरस्तादुत्तरादधरादभयं नो अस्तु ॥ अथर्वा १६-१५-५

अन्तरिक्ष हमारे लिये अभय करे । छी ओर पृथ्वी ये दोनों हमें अभय

करें। पीछे अभय हो, सामने ऊार और नीचे हमारे लिये अभय हो।

१= ॐ अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञातादभयं पुरोयः,

अभयं नक्तमभयं दिवा नः सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु ॥

अथर्व १६-१५-६

मित्र से अभय हो, अमित्र से अभय हो, ज्ञात (विषय) से अभय हो, परोक्ष (विषय) से अभय हो। रात्रि अभय हो, दिन अभय हो। सब दिशाएँ मेरी मित्र हों ॥

वेम शरदः
शरदः शत
१-२४

हिले से ही
नी वही तक
सी से दीन

वीयं धारण
धारण कर
धारण कर

वर्चोदा
आपृण ।

रीर की रवा
गने ! तू नेव
छ भी करो

१
वर् १६-१५-६

हमें अभय



❀ शिव संकल्प सूक्त ❀

१९. ओं यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवेति
दूरङ्गम ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु । १।
यजुर्वेद ३४-१

प्रभु जागते हुये सदा जो दूर दूर तक जाता है ।
सोते में भी दिव्य शक्तिमय कोसों दौड़ लगाता है ।
दूर दूर तक जाने वाला तेजों का भी तेज निधान ।
नित्य युक्त शिव संकल्पो से वो मेरा मन हो भगवान् ।

२०. ओं येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यजे कृष्वन्ति विदथेषु धीराः ।
यदपूर्णं यक्षमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ २॥ यजु ३४-२

जिसके द्वारा बुद्धिमान जन कर्तव्यों को करते हैं ।
सत्कर्मों को करें मनीषि वीर युद्ध में मरते हैं ।
पूजनीय अतिशय है जिसका प्रजा वर्ग में अद्भुत मान । नित्य युक्त

२१. ओं यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु ।
यस्मान्न ऋतो किञ्चन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु । ३।
यजुः ३४-३ ।

धीरज धीर शक्ति चिन्तन की जिममें रहे ज्ञान भरपूर
प्राणि मात्र में अमृत मय जो घर प्रकाश का बहता पूर

जिसके बिना नहीं चलता है प्राणि मात्र का कार्य विधान । नित्य युक्त०

२२ ओं येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत्परिगृहीतममृतो न सर्गम्
येन यज्ञस्तायते सप्तहोता तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु । ४। यजु ३४-४

अमर तत्त्व जो तीन काल का भेद यथावत पाता है ।
बुद्धि ज्ञान की पाँच इन्द्रियाँ अहकार से नाता है ।
इन्हीं सप्त ऋत्विज का फैला जहाँ सृष्टि का यज्ञ बितान नित्य युक्त०

२३ ओं यस्मिन्नृचः सामयजुःपि यस्मिन्प्रतिष्ठिता रथनाभा विवाराः
यस्मिन्चित्तं सर्वमोतां प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु । ५। यजु ३४-५

चार वेद निगमागम सारे ईश ज्ञान का सुन्दर स्रोत ।
रथ के पहिये में ज्यों आरे ऐसे रहते ओत प्रोत ।
जंगम जग का चित्त अचल हो जिसमें रहता निष्ठावान । नित्य युक्त०

२४ ओं सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्तेनीयतेऽभीष्टुभिर्वाजिन इव
हृत्प्रतिष्ठ यदजिर जविष्ठं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु । ६। यजु ३४-६

जो जन कुल को बागडोर से इधर उधर ले जाता है
चतुर सारथी ज्यों घोड़ों को सुन्दर चाल चलाता है ।
सदा प्रतिष्ठित हृदय देश में विपुल तीव्र गति अजर महान ।

नित्य युक्त०

३३ असतो मा सद्गमय तमासो मा ज्योतिर्गमय मृत्योर्माऽमृतं गमयेति ।

३४ नमः शम्भवाय च मयोन्नवाय च नमः शकराय
च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च ॥ यजु १६-२१

३५ ओः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः पृथिवि शान्तिरापः शान्तिरोपधयः
शान्तिः । वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वं
शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि ॥ यजु ३६-१७

❀ प्रार्थना ❀

हे परमेश्वर ! परमपिता परमात्मन् आप हमारे संरक्षक और सहायक तथा प्रेरक हैं। हम सब मिलकर एक तुम्हारी ही भक्ति करें; तुम्हारे ही चरणों में श्रद्धा भक्ति-पूर्वक सिर झुकाते रहें और एक मात्र तुम्हारी ही सहायता चाहें।

अय हमारे आत्मा जगदीश्वर ! आप अनन्त क्षमा स्वरूप और दयालु हैं। हे करुणासागर ! हम तुम्हें छोड़ कर और किसकी शरण लें ? केवल एक मात्र तुम ही हमारे आधार और अधिष्ठान हो। हे हमारे सर्वस्व परमात्मन् ! हम तुम्हारे पवित्र चरणों को बारम्बार प्रणाम करते हैं। आप ही हमारी टेक हो और पत रखने वाले हो। प्रतिज्ञा पर आप ही दृढ़ता के स्थिति स्थापक हो। हे अनन्त अपार प्रकाशस्वरूप, पवित्र ज्योति परमात्मन् ! आप हमको श्रेयस्कर श्रेष्ठ मार्ग से अपनी प्राप्ति की ओर ले चलिए। आप ही हमारे सत्पथ प्रदर्शक नेता तथा संचालक हैं। हे अन्तर्यामिन् ! हम तेरे हैं। हमको अन्तर्यामी रूप से प्रेरणा करो कि हम तेरे उस मार्ग पर चलें जिस पर तेरे पूर्ण भक्त ऋषि-महर्षि चले हैं और जिस मार्ग द्वारा तुमको प्राप्त हो चुक है, जिन पर तुम्हारा परम अनुग्रह तथा प्रसाद हुआ हो। और हे सर्वशक्ति-मान् हमारे प्रभो ! हमें उस मार्ग से कभी मत चलाओ जिस पर तेरे अभक्त चले हैं। और तुम्हारी प्रसन्नता से हम कभी वंचित न रहें। हे प्रभो ! तुम हमारे अन्तर्यामी प्रेरक सखा हो, हम तुम्हारी ही शरण हैं, अतएव हमारी रक्षा करो। हे जगदीश्वर जगदाधार ! हमको वह पवित्र दृढात्मिका बुद्धि प्रदान करो कि जिसमें केवल एक मात्र तुम्हारा ही दृढ़ विश्वास तथा निश्चय हो। हमको वह अहंकार दो कि जिसमें हम अपना आपा तुमको कह सकें, मन में तुम्हारा संकल्प शिव संकल्प उठे, चित्त में तुम्हारा ही विन्तन रहे। हमारे नेत्र और हृदय खुले हों और उन पर तुम्हारा पूरा अधिकार हो।

हमारे सबके द्वारा केवल आपकी जय हो । आप हमारे जीवन के नियन्ता प्राण स्वरूप हो । हे स्वामिन् ! हमारी प्रत्येक क्रियायें और चेष्टायें आपके चरणों में समर्पण होवें । हमारे भाव महान् उदार तथा गम्भीर हों । हम सब प्राणिमात्र को अपना ही आत्मा स्वरूप देखें और सबकी भलाई में अपनी भलाई समझें । अहर्निश परोपकार में रत रहें । और तुम्हारी ही भक्ति का सर्वत्र प्रचार करते हुए, अपने जीवन को सफल करते हुए, तुम्हारे पवित्र ज्योतिर्मय चरणों के समीप बैठने के योग्य बनें । हे पतित पावन ! दीनों का उद्धार करने वाले परमात्मन् । हमको ऐसी उदार बुद्धि दीजिए कि जिससे हम दोन दुखियों की सहायता सच्चे हार्दिक भाव से करें । हमें तुम्हारे प्रेम में ही जीवन प्रिय हो । हे विश्वात्मा ! विश्व स्वरूप ! हम तुम्हारे भक्ति मार्ग पर चलते हुए महान् दुःखों को भी सानन्द सहन कर सकें तुम्हारे भजन में दृढ़ रहें सबके साथ पवित्र प्रेम करें । हे प्रेमाकर हम सबको अपना ही आत्मा जानें, हमारा आचरण सबकी भलाई के लिए हो । हे अनन्त शक्ति परमात्मन् ! आपकी शक्तियाँ अपरिमित और वेगन्दाज हैं तुम्हारी दात से कोई बड़ नहीं सकता है तुम्हारी दक्षिणा ज्योति की तरह सबके ऊपर जगमगा रही है । तुम्हारी शक्तियों और सच्चे उदार वचनों, और मेहरबानियों का कोई नियन्ता नहीं है । कोई नहीं कह सकता है कि उसने मुझे नहीं दिया है । तुम्हारे द्वार से कोई निराश नहीं गया है । सबने अभीष्ट फल प्राप्त कर जीवन का फल पाया है । हे राम कृष्ण आदि अनन्त नामों और रूपों के धारण करने वाले हमारे सच्चे प्रभो ! अन्न में हमारी यही प्रार्थना है कि हम तेरे सच्चे भक्त बनें, तेरी ही भक्ति का प्रचार करें । हम सबके द्वारा तेरी ही इच्छा पूर्ण हो ! सर्वत्र तुम्हारा ही राज्य हो । हे अनन्त अपार ज्ञानानन्द स्वरूप ! आपको हमारा अनन्त धन्यवाद हो और आपका हमको आशीर्वाद हो । अतएव साञ्जलिबद्ध आपको भूयोऽपि नमस्कारो पर नमस्कार है ॥ ॐ शं करोतु शंकरः ।

गायत्री मन्त्र

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ॐ ।

ओं—सर्व व्यापक सबकी रक्षा करने वाले ।

भूः—सत्ता स्फूर्ति देने वाले सत्य स्वरूप ।

भुवः—दुःखों के नाश करने वाले ज्ञान स्वरूप ।

स्वः—सुख स्वरूप । तत्—अनन्त अपार सबके सारभूत परमात्मा ।

सवितु—सब जगत् को उत्पन्न करने वाले, पालन करने वाले संहार करने वाले पवित्र करने वाले प्रेरणा करने वाले ।

वरेण्य—भजनीय सर्वश्रेष्ठ

भर्गो—सब पापों का नाश करने वालो, तेज पुञ्ज ज्योति स्वरूप परमात्मा ।

देवस्य—दिव्य ज्ञान और आनन्द के देने वाले, विजय कराने वाले प्रकाश स्वरूप सर्व शक्तिमातृ परमात्मा का

धीमहि—हम सब ध्यान करते हैं ।

धियो—बुद्धियो कोयः—जोनः—हमारी

प्रचोदयात्—प्रेरणा करे । आप हमारी बुद्धियों को प्रेरणा करे कि हम आपको प्राप्त हो । हमको पवित्र बुद्धि और अपनी भक्ति प्रदान करें ॥

ॐ यत्तेजः सवितुर्देवस्य वरेण्यं तदुपात्महे
तत्तेजोऽस्माकं बुद्धिः श्रेयस्करेषु नियोजयेत् ॥

हे तेज पुञ्ज ज्योति स्वरूप परमात्मव । ज्ञान और आनन्द के देने वाले, विजय कराने वाले प्रार्थना और स्तुति करने योग्य सबको उत्पन्न करने वाले

सबका संहार करने वाले सबकी रक्षा करने वाले ! सबको प्रेरणा करने वाले ! अनन्त अपार आनन्दस्वरूप ज्ञानस्वरूप परमात्मन् हम तुम्हारा ध्यान करते हैं। तुम्हारे गुण हममें प्रकट हों और हम तुमको प्राप्त हों। जो तुम हो सो ही हम हैं और जो हम हैं सो ही तुम हो ऐसे ऐक्य भाव से हम तुम्हारा ध्यान करते हैं। तुम हमारी बुद्धियों को पवित्र और धर्मार्थ काम और मोक्ष में प्रेरणा करो। हम में तेरी सच्ची भक्ति और प्रेम प्रकट होवे। सबको हम अपना ही आत्मा समझें और हमारे शत्रु नाश को प्राप्त हों। भीतर काम क्रोध इत्यादि और बाहर हमारी उन्नति में बाधक विघ्न कारक शत्रु सब नाश हों जिसे ध्यानन्दपूर्वक हम आपको प्राप्त हों। धन्यवाद पूर्वक हमारी आपको अनन्त बार नमस्कार हो। हमारी रक्षा करो एक मात्र आप ही हमारे रक्षक हो। ओं शम्

ॐ निरञ्जनं बुद्धि भञ्जनं रंकार ओंकार

सत्य पुरुष सोहं तुही अलखं सर्वाधार।

ओम् निरञ्जन रंकार प्रभु सोहं सत्य नाम करतार।

अच्युत गुरु गोविन्द दातार परमानन्द रूप निरधार। १

एक अखण्ड ज्ञान भण्डार, तुमरी ज्योति का उजियार।

मैं मैं मैं पन सर्वाधार नेति नेति कर वेद उचार ॥ २

राम आत्मा अपरम्पार शंकर ब्रह्म सर्व का सार।

ओतप्रोत सब में निरकार जीवन प्राण आप ओंकार ॥ ३

हरि नारायण अग्नि तार देव देव मैं करहुं पुकार।

कृष्णानन्ताञ्चलहुं गोड, हुम् फट् अल्ला सब पसार ॥ ४

बिनबो तुमको बारम्बार प्रीतम प्यार करो उद्धार।

तदन गणपति नैनमभार होवे अनन्त तुम्हें नमस्कार ॥ ५

गुरु-वन्दना

आनन्दमानन्दकरं प्रसन्न ज्ञानस्वरूपा निबोधरूपा ॥
 योगीन्द्रसेव्यं भवरोगवैद्यम् श्रीमद्गुरुं नित्यमहं नमामि ॥ १ ॥
 परं पराणां परमं पवित्रं परेशपोशं सुरलोकनाथम् ।
 सुरासुरैरचितपादपद्मं सनातनं लोकगुरुं नमामि ॥ २ ॥
 त्वमेव माता च पिता त्वमेव त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव ।
 त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव, त्वमेव सर्वं मम देव देव ॥ ३ ॥
 स्वराज्य-साम्राज्य-विभूतिरेषा भवत्कृपा श्रीमहिम प्रसादात् ।
 प्राप्ता मया श्रीगुरवे महात्मने नमो नमस्तेऽस्तु पुनर्नमोऽस्तु ॥ ४ ॥

ब्रह्मानन्द परमसुखदं केवलं ज्ञानमूर्तिम्
 द्वन्द्वातीतं गगनसदृशं तत्त्वमस्यादि-लक्ष्यम् ।
 एकं नित्यं विमलमचलं सर्वधीमाप्तिभूतम्
 भावातीतं त्रिगुणरहितं सद्गुरुं तं नमामि ॥ ५ ॥

मम त्मा परमात्मा विश्वात्मा विश्वस्वरूप ।
 ब्रह्मात्मा सर्वात्मा सूर्यात्मा ज्योतिस्वरूप ।
 अखण्डात्मा पूणात्मा ज्ञानात्मा ज्ञानस्वरूप ।
 सुखात्मा चिदात्मा सदात्मा सत्यस्वरूप ।
 भावात्मा भवात्मा शून्यात्मा शून्यस्वरूप ।
 ज्ञातात्मा ज्ञेयात्मा ध्येयात्मा ध्यानस्वरूप ।

श्रीं नमः जम्भवाय च मयोभवाय च । नमः शङ्कराय
 च मयस्कराय च । नमः शिवाय च शिवतराय च ॥

श्रीगुरुं परमानन्दं वन्दे स्वानन्द-त्रिहम्
 यस्य साक्षिष्य मात्रेण चिदानन्दायते तनुः ।
 गुरुर्वद्वा गुरुविद्गुगुरुर्देवो महेश्वरः ।
 गुरुः साक्षात् परब्रह्म, तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥
 अज्ञान-तिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जन-शलाकया ।
 चक्षुरुन्मोलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥
 यत्सत्येन जगत्सत्यं यत्प्रकाशेन भाति यत् ।
 यदानन्देन नन्दन्ति तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥
 अण्डमण्डनाकारं व्याप्तं येन चराचरम् ।
 तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥
 ध्यानमूलं गुरोर्मूर्तिः पूजामूलं गुरोः पदम् ।
 मन्त्रमूलं गुरोर्वाक्यं मोक्षमूलं गुरोः कृपा ॥
 भाव पात्र में अर्पकर सुन्दर जीवन फूल ।
 सदगुरु के अर्पण करें यही ज्ञान का मूल ॥



दीनानाथ दयानिधि स्वामी कृपा मय प्रभु जी,
 कोन भाँति मैं तुम्हें रिभाऊँ ॥ (टेक)
 श्री गंगा चरणों से निकसी, शूबो नीर कहाँ से प्रभु लाऊँ ।
 कामधेनु कल्पवृक्ष तुम्हारे, कोन पदार्थ भोग लगाऊँ ॥ १
 चार वेद तुम मुख से भाषे, और कहा प्रभु पाठ सुनाऊँ ।
 अनहद बाजे बजत तिहारे, ताल मृदंग क्या शंख बजाऊँ ॥ २
 कोटि भानु थारे नख की शोभा दीपक ले प्रभु कहाँ दिखाऊँ ।
 लक्ष्मी थारे चरणन की चेरी कोन द्रव्य प्रभु भेंट चढ़ाऊँ ॥ ३
 तुम त्रिलोकी के कर्ता धर्ता, तुम्हें छोड़ प्रभु कोन पै जाऊँ ।
 सूर श्याम प्रभु विपत बिडारन, मन वांछित फल तुमही से पाऊँ ॥ ४

ईश्वर तू है सबका स्वामी, क्षमासिन्धु अरु अन्तर्यामी ।
 महिमा तेरी अपरम्पार, तुझ से गये वेद भी हार ।
 तूने सारा जगत बनाया, अनुपम दृश्य हमें दिखलाया ।
 सूरज तारे चाँद बनाये जल थल अनल पवन प्रगटाये ।
 न्यायी सत्य सिन्धु सुखखान, करुणानिधि तू है बलवान ।
 दानी जानी घट घट वासी, तू है निर्विकार अविनाशी ।
 जीना मरना तेरे हाथ, अधः पतन उन्नति सब हाथ ।
 यश अपयश का तू ही दाता, रूप न तेरा जाना जात ।
 चींटी से हाथी तक सारे जितने जीव जन्तु बेचारे
 देकर सबको दाना पानी, रखता तू उनकी निगरानी ।
 राई को पर्वत कर देता, पर्वत राई कर घर देता ।
 नगरों को तू निजंन करता बन में नगरी सिरजन करता ।
 ब्रह्मादि तब ध्यान लगाते नारदादि मुनिवर गुण गाते ॥
 गाते गाते वे थक जाते, तो भी पार न तेरा पाते ।
 हे ईश्वर ! हे जगदाधार ! महिमा तेरी अपरम्पार
 हमरी रख लीजे प्रभु लाज वित्त यही करते हैं आज ।
 हे प्रभु रक्षा करो हमारी, हम आये हैं शरण तुम्हारी
 निशि दिन के अपराध हमारे क्षमा करो करुणानिधि सारे ॥

हे नाथ ! हे प्रभु ! महा महिमा तुम्हारी, वाणी नहीं कह सुन सकती हमारी
 सो वर्ष भी यदि सदा तब कीर्ति गावें, तो भी कभी न उसका हम पार पावें
 पृथिवि पहाड़ नद पेड़ समुद्र सारे, हैं ये समस्त जगदीश दिये तुम्हारे ॥
 हे ईश यदि आप सूर्य हमें न देते, तो जीव जन्तु जग में न कदापि जीते ।
 यह जो अनेक फल हैं जग में दिखाते, खाते नहीं हम कभी जिनको अर्थात् ॥
 ये पुष्प नेत्र सुखदायक जो खिले हैं, सो भी सभी तब कृपा कण से मिले हैं
 देते न जो तुम हमें जगदीश अर्थात्, पाते इन्हें न करते यदि यत्न लाखें
 हे सर्वलोक सुखदायक सोख्य धाम, हे विश्वनाथ विश्वेश तुम्हें प्रणाम

हो जो छिपाय
 हो मो उसी क्ष
 हे दयामय
 हो भूत चूक प

भा
 चर
 अन
 जान
 अन
 बु
 हे स
 दास

पितु मातु
 जिनके कु
 प्रतिपाल
 भूले हैं
 उपकारन
 महाराज
 शुभ शान्ति
 इस जीवन
 तुम सो

जो जो छिपाय हम काम बुरे करें है जानें न और इससे मन में डरे है
 सो सो उसी क्षण सदा तुम जान लेते, तत्काल नाथ हमको तुम दण्ड देते
 हे हे दयामय प्रभो कर जोरते हैं, सारी कुचाल अबसे हम छोड़ते हैं
 जो भूज चूक परमेश्वर हो हमारी, कीजे क्षमा शरण में हम हैं तुम्हारी ॥



भक्त अपने पद कमल की दीजिये प्रभु दीजिये
 चरण-सेवक आप अपना कीजिए हरि कीजिए ॥ टेक ॥
 अनगिनत ये वस्तुयें प्रभु आपने की हैं प्रदान,
 ज्ञान की शक्ति हमें प्रभु दीजिए हरि दीजिये ॥ १
 अनहित न होवे जन्म भर हमसे किसी का हे प्रभो !
 बुद्ध ऐसी आप हमको दीजिए हरि दीजिये ॥ २.
 हे स्वामी चरणों में तुम्हारे, कोटि बार प्रणाम हो ।
 दास हमको आप अपना कीजिए हरि कीजिये ॥ ३



पितृ मातृ सहायक स्वामि सखा, तुमहीं एक नाथ हमारे हो
 तिनके कुछ और आधार नहीं तिनके तुमही रखवारे हो ॥ टेक
 प्रतिपाल करो सगरे जग को, अतिशय करुणा उर धारे हो ।
 भूले हैं हमहीं तुमको तुम तो हमारी सुध नाहि बिसारे हो ॥
 उपकारन का कछु अन्त नहीं छिनहीं छिन जो विस्तारे हो ।
 महाराज महा महिमा तुम्हरी, समझे विरले बुधवारे हो ॥ २
 शुभ शान्ति-निकेतन प्रेम निधे ! मन मन्दिर के उजियारे हो ।
 इस जीवन के तुम जीवन हो, इन प्राणन के तुम प्यारे हो ॥ ३.
 तुम सो प्रभु पाय प्रताप हरे, केहि के अब और सहारे हो ॥

हे प्रभो आनन्द दाता ज्ञान हमको दीजिये ।
 शीघ्र सारे दुर्गुणों को दूर हमसे कीजिये ॥
 लांजिये हमको शरण में, हम सदाचारी बनें ।
 ब्रह्मचारी धर्मरक्षक वीर व्रतधारी बने ॥
 सृष्टि-पालक दुष्ट घातक भक्त सुखदायक तुम्हीं ।
 दीन-बन्धु करुणा-सागर और सब लायक तुम्हीं ॥
 प्रह्लाद ध्रुव के सम हमें, प्रभु अपनी भक्ति दीजिये ।
 देश हित तन धन बली करने को तत्पर कीजिये ॥



दीन बन्धो ! हम सबन को ज्ञान भिक्षा दीजिए ।
 आपके हम पुत्र हैं सब भाँति रक्षा कीजिए ॥
 दो हमें वर भक्ति अपनी और सुन्दर धीरता ।
 शक्ति विद्या मान धन यश आदि सच्च वीरता ॥
 देश सेवो हम सभी हों सत्य ही भाषण करे ।
 झूठ छल चोरी जुवा से नित्य हे ईश्वर डरें ॥
 अन्त में सब शिशु गणों को आपसे विनतो यही ।
 हों सभी इस योग्य जो शोभित करें भारत मही ॥



हे जगन्नाता विश्व विधाता, हे मुख शान्ति निवेतन हे । टेक
 नित्य अखण्ड अनन्त अनादि, पूरण ब्रह्म सनातन हे ।
 जग धात्रय, जगन्मति, जगवन्दन, अनुपम अलख निरंजन हे ।
 प्रेम के सिन्धो, दीन के बन्धो, दुख दारिद्र्य विनाशन हे ।
 प्राण सखा त्रिभुवन प्रतिपालक, जीवन के अवलम्बन हे ॥



हमारा प्यारा यह आश्रम, बड़े दिन दिन २
 बुराई जो यहाँ पर हों, घटे दिन दिन २ ॥ टेक ॥
 निरामय यहाँ के वासी हों, दिलों में प्रेम को मंगा बहे ।
 सब सत्य विद्या को पढ़ें दिन दिन, दिन दिन ॥ १ ॥
 अधिक हों श्रेय मार्ग के, प्रेय में भटक ना जाए ।
 सात्विकी भावना का ड्रुम, हृदय भू पर फले दिन दिन ॥ २ ॥
 चने पीयूषमय जीवन, प्रभो आदर्श शिक्षा से ।
 मिलें सब हमको सहयोगी भले दिन दिन २ ॥ ३ ॥
 कटे पारतन्त्र की बेड़ी रहें आनन्द से हिलमिल ।
 पुष्प सम यह हमारा मन चरणा पङ्कज चढ़े भगवत् ॥ ४ ॥

हे प्रेममय प्रभो ! तुम्हीं सबके आधार हो ।

तुमको परम पिता प्रणाम बार बार हो ॥

ऐसी कृपा करो कि हम सब धर्म वीर हो ।

वैदिक पवित्र धर्म का जग में प्रचार हो ॥

संदेश देश देश में वेदों का दें सुना ॥

समभाव और प्रेम का सब में प्रसार हो ।

असहाय की सहाय बन उपकार हम करें ।

अभिमान से बचें हृदय निर्भय उदार हो ॥ १ ॥

फूले फले संसार में यह रम्य वाटिका ।

कर्तव्य का अपने सदा हमको बिचार हो ॥ २ ॥

स्वाधीनता के मन्त्र का जप हम सदा करें ।

सेवामें मातृभूमि के तन मन निसार हो ॥ ३ ॥

प्रार्थना

ईश्वर तुम ही दया करो तुम बिन हमारा कौन है ।
 दुर्बलता दीनता हरो तुम बिन हमारा कौन है ।
 माता तुही तूही पिता बन्धु तुही तू ही सखा
 केवल तुम्हारा आसरा, तुम बिन हमारा कौन है ॥१॥
 जग को रचाने वाला तू दुःख को मिटाने वाला तू ।
 बिगड़ी बनाने वाला तू, तुम बिन हमारा कौन है ॥२॥
 कुछ भी नहीं हमें खबर, तेरी दया को छोड़कर ।
 जाए तो जाए हम किसर तुम बिन हमारा कौन है ॥३॥
 तेरा भजन तेरा मनन तेरी ही धुन तेरी लगन ।
 तेरी प्रारण हरि प्ररण तुम बिन हमारा कौन है । ४ ॥

यज्ञ प्रार्थना

यज्ञरूप प्रभो हमारे भाव उज्ज्वल कीजिये ।
 छोड़ देवें छल कपट को मानसिक बल दीजिए । १।
 वेद की बोलों ऋचाएँ सत्य को प्रारण करें ।
 हर्ष में हों मग्न सारे शोक सागर से तरें । २।
 अश्वमेधादिक रचाएँ यज्ञ पर उपकार को ।
 धर्म मयीदा चलाकर लाभ दें संसार को । ३।
 नित्य श्रद्धा भक्ति से यज्ञादि हम करते रहें ।
 रोग पीड़ित विश्व के सन्ताप सब हरते रहें । ४।

कामना मिट जाय मन से पाप घट्याचार की ।
 भावनाएँ पूर्ण हों ये यज्ञ से नर नार की । ५।
 लाभकारी हो हवन पर जीवधारी के लिए ।
 वायु जल सर्वत्र हो शुभ गन्ध को धारण किये ।
 स्वायं भाव मिटे हमारा प्रेम पथ विस्तार हो ।
 इदम मम का सार्थक प्रत्येक में व्यवहार हो । ७।
 हाथ जोड़ भुकाए मस्तक वन्दना हम कर रहे ।
 नाथ करुणारूप कहना आप की सब पर रहे । ८।

यज्ञ महिमा

होता है सारे विश्व का कल्याण यज्ञ से ।
 जल्दी प्रसन्न होते हैं भगवान यज्ञ से । १।
 ऋषियों ने ऊँचा माना है वह स्थान यज्ञहार
 करते हैं दुनियाँ वाले सब सम्मान यज्ञ का ।
 दर्जा है तीन लोक में महान यज्ञ का ।
 भगवान का है यज्ञ और भगवान यज्ञ का ।
 जाता है देव लोक में इन्सान यज्ञ से ।
 होता है सारे विश्व का कल्याण यज्ञ से ।
 २—करना हो यज्ञ प्रकट हो जाते हैं अग्नि देव ।
 डालो विहित पदार्थ खाते हैं अग्नि देव ।
 सबको प्रसाद यज्ञ का पहुँचाते हैं अग्नि देव ।
 बादल बना के भूमि पर बरसाते हैं अग्नि देव ।

बदले में एक के अनेक दे जाते हैं अग्नि देव ।

पोदा अनाज होता है भगवान यज्ञ से ।

होता है सार्थक वेद का विज्ञान यज्ञ से । होता है सारे

३—शक्ति और तेज यश भरा इस शुद्ध नाम में ।

साक्षी यही है विश्व के हर नेक काम में ।

पूजा है इसको श्रीकृष्ण भगवान राम ने ।

होता है कन्या दान भी इसी के सामने ।

मिलता है राज्य कीर्ति, सन्तान यज्ञ से । होता है

४—सुख शान्ति दायक मानते हैं सब मुनि इसे ।

वशिष्ठ विश्वामित्र और नारद मुनि इसे ।

इसका पुजारी कोई पराजित नहीं होता ।

भय यज्ञ कर्ता को कभी किंचित नहीं होता ।

होती हैं सारी मुश्किलें आसान यज्ञ में ।

५—चाहे अमीर है कोई चाहे गरीब है ।

जो नित्य यज्ञ करता है वह खुश नसीब है ।

हम सब में आए यज्ञ के अर्थों की भावना ।

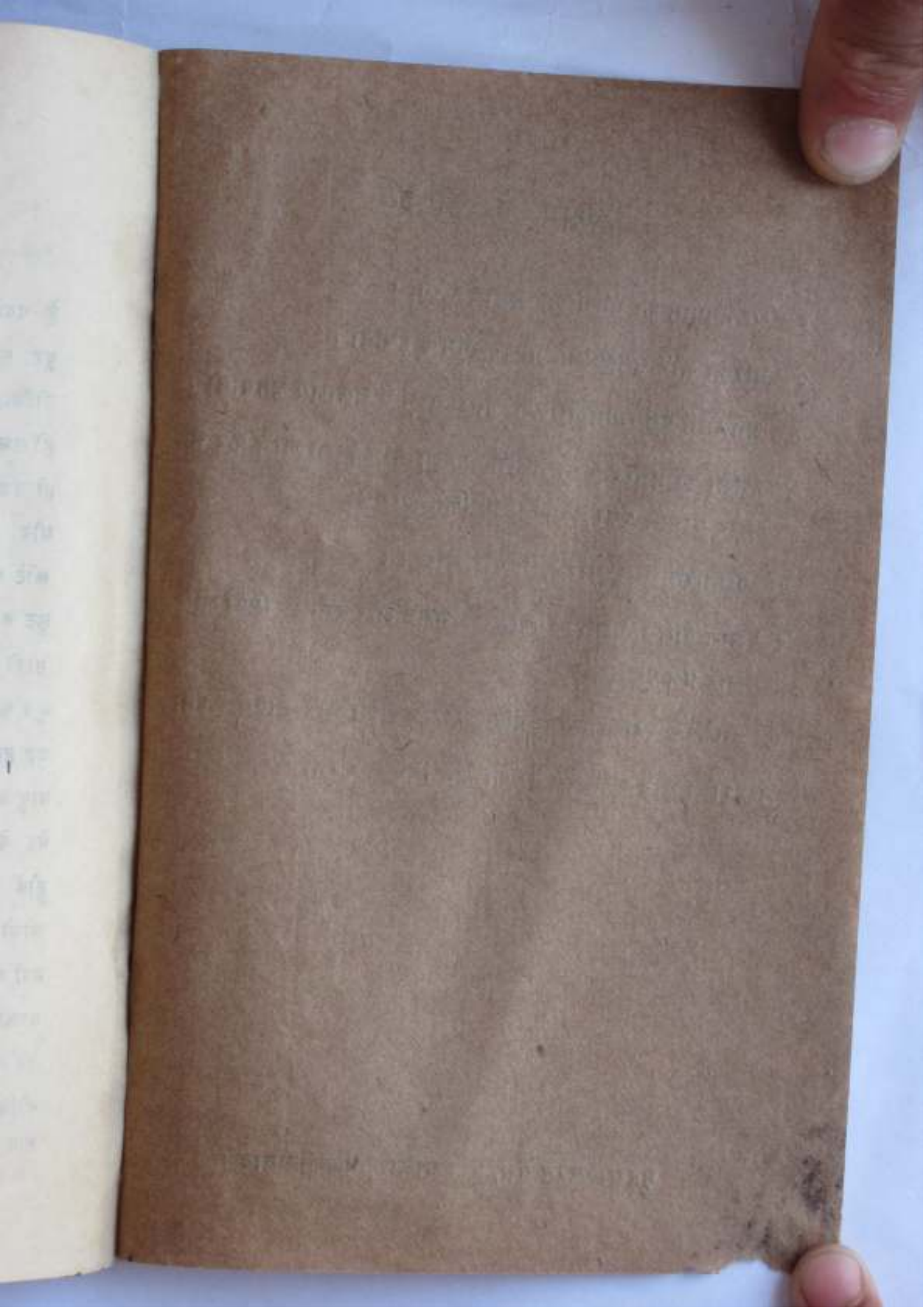
जखमी के सच्चे दिल में है यह श्रेष्ठ कामना ।

होती है पूर्ण कामना महान यज्ञ से ॥

भजन

हे दयामय हम सबो को शुद्धताई दीजिए,
दूर करके हर बुराई को भलाई दीजिए ।
कीजिए ऐसा अनुग्रह हम पे हे परमात्मा,
हों सभासद इस सभा के सब के सब धर्मात्मा,
हो उजाला सब के मन में ज्ञान के प्रकाश से ।
और अंधेरा दूर सारा हो अविद्या नाश से ।
छोटे कर्मों से बचें और तेरे गुण गावें सभी ।
छूट जावें दुःख सारे सुख सदा पावें सभी ।
सारी विद्याओं को सीखें ज्ञान से भरपूर हों ।
शुन कर्मों में होवे तत्पर दुष्ट गुण सब दूर हों ।
यज्ञ हवन से हो सुगन्धित अपना भारत वर्ष देश ।
वायु जल सुखदायी होवे जायें मिट सारे क्लेश ।
वेद के प्रचार में होवें सभी पुरुषार्थी ।
होवें आपस में प्रीति और बनें परमार्थी ।
लोभी कामी और क्रोधी कोई भी हम में न हो ।
सर्ग व्यसनों से बचें और छोड़ दें मोह को ।
अच्छी संगत में रहें और वेद मार्ग पर चलें ।
तेरे ही होवें उपासक और कुकर्मों से बचें ।
कीजिये हम सबका हृदय शुद्ध अपने ज्ञान से ।
मान भक्तों में बढ़ाओ अपनी भक्ति दास से ।

परम पिता पूरण प्रभु परमानन्द अपार
 प्रेम हूँ पावन परम ईश्वर सर्वाधार
 दीन दयालु दयानिधि दाता परम उदार
 सब देवन के देव हे दुःख दोषन से पार
 शक्ति ज्ञान आनन्द के हे पूरा भण्डार
 सब से सुन्दर हे हरे सब मारों के मार
 हाथ जोड़ हो वन्दना तुमको बारम्बार
 शक्ति भाव से नग्न हो मन से श्रद्धाधार
 तेरी ऐसी हो दया हम में बड़े मिलाप
 सब शक्ति का मान है मिटे फूट का पाप
 मीठी माला मेल की फेरें हम दिन रात
 जो जीवन से एक हो तजें कलह की बात
 हम आये एकता भ्रातृपन का भाव
 दिन दिन बल शक्ति बड़े धरम करम में आव ।



आश्रम के उद्देश्य

- १—श्री भगवान की भक्ति का प्रचार करना ।
- २—गोरक्षा और उसके लिए गोचर भूमि छुड़वाना ।
- ३—जंगलों में पेड़ लगवाना और उसके बीच में जलाशय बनवाना ।
- ४—शिक्षा का प्रचार करना जिसमें मनुष्य मात्र विद्या लाभ कर सकें और प्राचीन प्रथा को फिर प्रचलित करना ।
- ५—बीमारियों के अवसर पर दवाई बाँटना ।
- ६—आस पास के ग्रामों में परस्पर के झगड़े और वैमनस्य मिटा शान्ति और प्रेम बढ़ाना ।
- ७—सब संस्थाओं में भगवद्भक्ति और धर्म का भाव जाग्रत करना ।
- ८—राजा और प्रजा सब ही का हित चिन्तन करना ।

370009 4-19.7.72

Jai Lal Singh Jind ch.

Freight Paid 1.50

+ 25

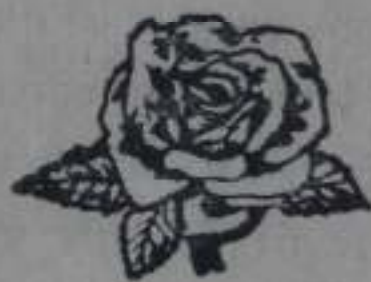
1.75



ब्रह्मनिष्ठ

श्री १०८ स्वामी परमानन्द जी

महाराज



ब्रह्मनिष्ठ

श्री १०८ स्वामी परमानन्द जी

महाराज



जगन्नियन्ता जगदीश्वर संसार को मन्मार्ग की ओर प्रेरित करने के लिए समय समय पर अपनी विभूतियों से यहाँ अवतरित होता रहता है। 'धर्म संस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे' ऐसी प्रतिज्ञा जो है उसकी गीता में। ऐसी ईश्वरीय महाविभूतियों का नितान्त अभाव तो संसार के शायद ही किसी देश में हो, पर भारत माता की कोख तो इनके लिए विशेष उर्वरा रही है। आज के इस भौतिकतावादी घोर कलियुग में भी अपनी ही पीढ़ी के सामने श्री रामकृष्ण परमहंस महर्षि रमण, अरविन्द घोष आदि अनेक जाज्वल्यमान रत्न अपनी छटा दिखा चुके हैं। भगवान् की ऐसी ही परम विभूति, ऐसे ही परम उच्च कोटि के सन्त श्री १०८ स्वामी परमानन्द जी महाराज थे।

श्री महाराज जी का पार्थिव गरोर कब्र पृथ्वी पर अवतरित हुआ, कुल कितने दिन तक उन्होंने इस शरीर को संसार में रक्खा—ये सब केवल अनुमान के ही विषय हैं। श्री महाराज जी वैसे तो अपने आपको प्रायः छिपाये ही रहते थे, किन्तु फिर भी एक आध भाग्य-शालियों को उनके शरीर परिवर्तन आदि ऐसे चमत्कार देखने को मिले हैं जिससे उनके अनेक भक्तों का ऐसा विश्वास है कि जिस शरीर से वे संसार के सामने इन तीस चालीस वर्षों में आये उसमें तो उन्होंने कुछ समय तक लीला दिखाने के लिए प्रवेश कर लिया था। वैसे वे क्या थे इसे तो वे ही जानें। हाँ इतना अवश्य है कि

उनकी भाषा में ब्रजभाषा की भलक दीख पड़ती थी। एक आध बार प्रसंग चलने पर उन्होंने यह कहा था कि हमारा शरीर मथुरा जिले का है। पर हमें इन सबसे क्या लेना है। छोड़िये इन बातों को।

तो प्रायः आधी शताब्दी पहले श्री महाराजजी ने अपनी लीला भूमि दिल्ली के आस पास के कुछ जिलों को बनाया। श्री महाराजजी कभी कहीं कभी कहीं विचरते हुए अपने परमानन्द के प्रसाद को लुटाया करते थे। इन्हीं दिनों रेवाड़ी के स्व० राव बलवीर सिंह को श्री महाराज जी के दर्शन हुए। इस समय राव बलवीर सिंह जी का जीवन कोई बड़ी श्रेष्ठता लिए हुए नहीं था। जो बातें सामान्य रूप से बड़े बड़े रईस जागीरदारों में दीखा करती हैं वे ही बातें प्रमुख थीं इन दिनों उनके जीवन में। किन्तु किसी जन्म के शुभ कर्मों के फल-स्वरूप राव साहब श्री महाराज जी की ओर आकृष्ट हुए और उनसे अपने गाँव चलने का आग्रह किया। श्री महाराज जी बस्ती से दूर ही रहना पसन्द करते थे, परन्तु राव साहब का प्रेम देखकर वे उनके गाँव रामपुरा पधारे और वहाँ एक-दो दिन रहे भी।

बस यह प्रथम दर्शन का आकर्षण धीरे धीरे भक्ति में बदला और भक्ति बदली समर्पण में; और फिर इसी समर्पण भाव के फलस्वरूप रामपुरा से कुछ ही फर्लाङ्ग की दूरी पर पश्चिम की ओर श्री भगवद् भक्ति आश्रम की स्थापना हुई। अनेक भाग्यशाली लोग इस आश्रम में आये और श्री महाराज जी के दर्शन एवं सत्संगसे सफल जीवन बने। श्री महाराज जी ने आश्रम में भगवत्प्रेम की और दिव्य आनन्द की ऐसी

गंगा प्रवाहित की कि श्री कृष्णावतार की आनन्दमयी स्मृतियाँ नाकार हो उणीं । हर समय सत्संग कीर्तन, भगवद् भक्ति के नृत्यगीत मस्ती और आनन्द का वातावरण । पृथ्वी पर स्वर्ग का साम्राज्य । साँप-बिच्छू का, चोर-डकैत का, जरा मृत्यु का कोई भी भय नहीं । जिधर देखो, जहाँ देखो, बस आनन्द ही आनन्द, शुद्ध निश्छल पवित्र आनन्द ।

जैसा आश्रम रामपुरा (रेवाड़ी) में बना वैसा ही एक आश्रम जींद में भी बना । कुछ अन्यान्य छोटे छोटे आश्रम भी श्री महाराज जी की कृपा से अन्यान्य स्थानों पर बने और सभी में उसी आनन्द की वर्षा श्री महाराज जी ने की ।

समय ने पलटा खाय़ा । एक दिन वह सब सुख, वह सारा आनन्द हमसे छिन गया । श्री महाराज जी हमें छोड़कर चले गये । हिमालय पर्वत के शिमला स्थित जाखू शिखर पर श्री महाराज जी ने संवत् १९९३ की श्रावण कृष्णा पंचमी को अपना भौतिक शरीर छोड़ दिया ।

बस तभी से इस पंचमी के दिन आश्रम में श्री महाराज जी का निर्वाण-दिवस प्रति वर्ष मनाया जाता है जिसमें सत्संग कीर्तन भजन उपदेश इत्यादि हुआ करते हैं । आपसे प्रार्थना है कि आप प्रति वर्ष इस पावन दिवस पर आश्रम आया करें और सत्संग लाभ किया करें । ध्यान रहे, मनुष्य की योनि में जन्म पाकर यदि भगवान का भजन कीर्तन सत्संग न किया तो यह जीवन ही व्यर्थ रहा ।

एक सूचना और-इन श्री स्वामी परमानन्द जो महाराज की दिव्य लीलाएँ शीघ्र ही पुस्तक रूप में प्रकाशित होने वाली हैं । पुस्तक प्रेस में है । आप इसको प्रतीक्षा करें । इसे पढ़ने से उन दिनों के दिव्य आनन्द की झलक आपको अवश्य मिल सकेगी ।

निवेदक—

भगवद्-भक्ति-आश्रम जींद

सत्य-शब्द-संग्रह

(चतुर्थ भाग)



प्रकाशक

श्रीभगवद्भक्ति आश्रम (कुरुक्षेत्र)

जींद (हरियाना)



उत्तीसवीं बार

१०००

सं० २०२५

मूल्य-सदुपयोग

गायत्री प्रार्थना

ॐ भूर्भुवः स्वः । तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो
देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ॐ॥

ओं—सर्व व्यापक, सबकी रक्षा करने वाले,

भूः—सत्ता स्फूर्ति देने वाले, सत्य स्वरूप,

भुवः—सर्व दुःखों के नाशक, चैतन्य-स्वरूप और ज्ञान स्वरूप,

स्वः—सुख-स्वरूप सबको सुख देने वाले,

तत्—अनन्त, अपार, परब्रह्म,

सवितुः—सब जगत् के उत्पन्न करने वाले, प्रेरणा करने वाले,
पवित्र करने वाले सविता देव,

वरेण्यम्—भजनीय, उपासनीय, वर्णन करने योग्य,

भर्गो—सब पापों के भर्जन नाश करने वाले, शुद्ध तेजः स्वरूप,
ज्योतिस्वरूप परब्रह्म परमात्मा,

देवस्य—दिव्य ज्ञान, आनन्द और प्रकाश के देने वाले दिव्य
स्वरूप सर्वशक्तिमान् परमात्मा का,

धीमहि—हम सब ध्यान करते हैं ।

धियो—बुद्धियों को

यः—जो

नः—हमारी

प्रचोदयात्—धर्म अर्थ काम और मोक्ष में प्रेरणा करें ।

संसार से हटाकर अपने स्वरूप में लगावें और शुद्ध
बुद्धि प्रदान करें ।

गायत्री-भाष्य एवं प्रार्थना

ॐ यत्तेजः सवितुर्देवस्य वरेण्यं तदुपास्महे ।

तत्तज्जोऽस्माकं बुद्धिः श्रेयस्करेषु नियोजयेत् ॥

हे तेजःपुञ्ज ज्योतिस्वरूप परमात्मन् ! ज्ञान और आनन्द के
वाले ! विजय कराने वाले ! प्रार्थना और स्तुति करने योग्य ! सब
उत्पन्न करने वाले ! सबका संहार करने वाले ! सबकी रक्षा करने
वाले ! सबको प्रेरणा करने वाले ! अनन्त, अपार, आनन्दस्वरूप
ज्ञानस्वरूप परमात्मन् ! हम तुम्हारा ध्यान करते हैं । तुम्हारे
हममें प्रकट हों और हम तुमको प्राप्त हों । जो तुम हो सो ही हम
और जो हम हैं सो ही तुम हो—ऐसे ऐक्यभाव से हम तुम्हारे
ध्यान करते हैं । तुम हमारी बुद्धियों को पवित्र और धर्मार्थ काम
मोक्ष में प्रेरणा करो । हममें तेरी सच्ची भक्ति और प्रेम प्रकट हो
सबको हम अपना ही आत्मा समझें और हमारे शत्रु नाश को
हों भीतर काम क्रोध इत्यादि और बाहर हमारी उन्नति में बाधा
विघ्न कारक शत्रु सब नष्ट हो, जिससे आनन्दपूर्वक हम आपको प्राप्त
हों । धन्यवाद पूर्वक हमारी आपको अनन्त वार नमस्कार हो । हम
रक्षा करो, एकमात्र आप ही हमारे रक्षक हो ।

॥ ओ३म् शम् ॥

कबीरदास

मन फूला फूला
माता कहै यह पु
भाई कहै यह भु
पेट पकड़ कर
लपट भपट के
जब लग जीवै
तेरह दिन तक
चार गजी चर
चारों कोने अ
हाड़ जरै ज
सोना ऐसी व
घर की तिरिय
कहै कबीर सुन

खाट
भाई
कहै

और सुमरुं खेड़े को भुइयाँ ऊजड़ खेड़ा दिया बसाई ॥१॥
 रामचन्द्र जी ने ऐसा सुमरुं लंका करी चढ़ाई ।
 लंकापति रावण ने सुमरुं रामचन्द्र जी सिया हरलाई ॥२॥
 मेघनाथ ने ऐसो सुमरुं शक्ती बान चलाई ।
 बाल जती लछमन ने सुमरुं मार लियो मेघनाथ बलदाई ॥३॥
 पांचों तो पांडवां ने सुमरुं जिन की करी सहाई ।
 हनूमान जोधा ने सुमरुं ठोक पीट वाकी लंका जराई ॥४॥
 तुलसी दास भजो भगवाना हरि चरणन चित लाई ।
 विभीषण ने ऐसो सुमरुं लंका को राज दियो रघुराई ॥५॥

१२६

जाहि लगन लागी घनस्याम की ।

घरत कहूं पग पर परत हैं कितहूं, भूल जाय सुधि धाम की ॥
 छवि निहार नहि रहत सार कथुं, घरि पल निसिदिन जामकी
 जित मुंह उठै तित ही धावै, सुरत न छाया घाम की ॥
 अस्तुति निदा करौ भल ही, मेड़ तजी कुल गाम की ।
 नारायन बीरी भई डोलै, रही न काहू काम की ॥

१२७

मोहन बसि गयो मेरे मन में ।

लोक लाज कुल कानि छूटि गई, याकी नेह लगन में ॥१॥
 जित देखों तितही वह दीखै, घर बाहर आंगन में ।
 अंग अंग प्रति रोम रोम में, छाई रह्यो सारे तन में ॥२॥
 कुण्डल भलक कपोलन सोहै, बाजूबन्द भुजन में ॥३॥

कंकन कलित ललि
 वल नैन, भ्रुकुट
 तारायण विन मो

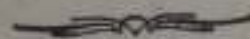
श्या
 ज्यों ज्यों नाम ले
 ना जानी अब सुध
 नारायण नहि छ

वे
 चितवन में, चित
 कब सों परी द्वार
 नारायण महबूब

तुम ही रहत भ
 तुम्हरे बीच गयो
 अब क्यों रोवत
 घरके भेदो वैठि
 नारायण मोहि

आश्रम के उद्देश्य

- १—श्री भगवान् की भक्ति का प्रचार करना ।
- २—गोरक्षा और उसके लिये गोचर भूमि छुड़वाना ।
- ३—जंगलों में वृक्ष लगवाना और उसके बीच जलाशय बनवाना ।
- ४—शिक्षा का प्रचार करना, जिसमें मनुष्य मात्र विद्या लाभ कर सकें और प्राचीन प्रथा को फिर प्रचलित करना ।
- ५—बीमारियों के अवसर पर दवाई बाँटना ।
- ६—आसपास के ग्रामों में परस्पर के झगड़े और वैमनस्य मिटाकर शान्ति और प्रेम बढ़ाना ।
- ७—सब संस्थाओं में भगवद्भक्ति और धर्म का भाव जाग्रत करना ।
- ८—राजा और प्रजा सब ही का हित चिन्तन करना ।



सन्त - वचनासूत

संग्रहकर्ता:-

स्वामी रामानन्द जी सरस्वती 'राम'

प्रकाशक:-

श्री भगवद्-भक्ति आश्रम, जींद, पंजाब

दानकर्ता:-

श्री योगध्यान जी ऐम्० ए० जींद निवासी ने एक सहस्र एक सौ
पुस्तकें लोक कल्याण की भावना से अपने पूज्य पिता जी
स्व० श्री दुलीचन्द जी की पुण्य स्मृति में अर्पवाई ।

संवत्
२०२२

मूल्य
सदुपयोग

भूमिका

श्री १००८ स्वामी परमानन्द जी महाराज के पार्थिव शरीर के जन्म के सम्बन्ध में केवल इतना ही निश्चित ज्ञात है कि इन योगिराज एवं लीलाविहारी को अवतरित करने का सौभाग्य भी ब्रजभूमि को ही मिला था । एक बार भ्रमण करते हुए आपने रेवाड़ी के श्री राव बहादुर बलवीरसिंह जी को दर्शन दिये । उनके दर्शन मात्र से राव साहब के जीवन में एक महान् परिवर्तन आया और उन्होंने तथा भक्त नन्दकिशोर जी मोरपंखवाला आदि कुछ अन्य सज्जनों ने श्री महाराज जी से वहाँ पर लोकोन्नति के लिये कोई कार्य प्रारम्भ करने की प्रार्थना की । अतएव श्री महाराज जी ने श्री भगवद्भक्ति आश्रम, रेवाड़ी की स्थापना की । इसके कुछ वर्ष पश्चात् श्री महाराज जी ने जींद बीड़ में भी एक आश्रम की स्थापना की । इन आश्रमों के माध्यम से श्री महाराज जी ने अनेक लीलाएँ एवं लोकोपकारी कार्य किये । (उनकी लीलाओं के संग्रह का प्रयत्न चल रहा है । जिन सज्जनों के पास ऐसे अनुभव हों वे कृपया 'श्री ओंकारनाथ अग्रवाल, बड़ा बाजार, शिकोहाबाद' मैनपुरी, को लिख भेजें ।) इन चरित्रों द्वारा भक्त जनों को आनन्द देते हुए श्री महाराज जी संवत् १९९२ (सन् १९३६) की श्रावण कृष्ण पंचमी को नगराज हिमालय के शिमला-स्थित जाकू शिखर पर अपने लीला विग्रह को छोड़ कर अपने स्वरूप में समा गए ।

श्री महाराज जी अपने भौतिक रूप में हमारे चर्मक्षुओं के सम्मुख अब नहीं हैं, किन्तु हमारे मनश्चक्षुओं के सामने उनके प्रिय एवं स्वरचित भजन, उपदेश आदि अब भी वर्तमान हैं । उनमें से ही कुछ को इस संकलन द्वारा जनता के लिये सुलभ कराने का प्रयास किया गया है । हमें विश्वास है कि प्रेमीजन इनके अध्ययन-मनन द्वारा अपने जीवन को सफल बनाने की चेष्टा करेंगे ।

—राम

॥
ओं भूर्भुवः स्वः तत्स
वितो यो नः प्रचोदयात् ॥

श्री—सर्व व्यापक सर्वकारी र

भूः—सत्य स्वरूप;

भुवः—चैतन्य स्वरूप, ज्ञान

स्वः—सुख स्वरूप;

तत्—वह अनन्त परमात्मा;

सवितुः—सबको उत्पन्न करने

वरंयम्—प्रदण करने योग्य, त

मर्गो—सब पापों का भर्जन नाश

देवस्थ—प्रकाश और आनन्द के

वामोह—हम सब ध्यान करते हैं;

धियः—बुद्धियों का;

यः—वह परमात्मा;

नः—हमारा;

प्रचोदयात्—वर्मा, अर्थ, काम, मोक्ष

शरीर अपने स्वरूप में लगावे और

श्री यत्तेजः सवितुर्वरंयं वरंयं

तत्तेजोऽस्माकं बुद्धीः श्रेयस्करेषु

हे तेजःपुञ्ज ज्योतिःस्वरूप

देने वाले ! विजय कर

॥ प्रार्थना ॥

ओं भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि
धियो यो नः प्रचोदयात् ॥

ओं—सर्व व्यापक सबकी रक्षा करने वाले ;

भूः—सत्य स्वरूप ;

भुवः—चैतन्य स्वरूप, ज्ञान स्वरूप ;

स्वः—सुख स्वरूप ;

तत्—वह अनन्त परमात्मा ;

सवितुः—सबको उत्पन्न करने वाले ;

वरेण्यम्—ग्रहण करने योग्य, तारीफ के लायक ;

भर्गो—सब पापों का भर्जन नाश करने वाले, शुद्ध तेजस्वरूप ;

देवस्य—प्रकाश और आनन्द के देने वाले ऐसे परमात्मा का ;

धीमहि—हम सब ध्यान करते हैं ;

धियः—बुद्धियों को ;

यः—वह परमात्मा ;

नः—हमारी ;

प्रचोदयात्—धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष में प्रेरणा करे संसार से
हटाकर अपने स्वरूप में लगावे और शुद्ध बुद्धि प्रदान करे ।

ओं यत्तेजः सवितुर्वरेण्यं तदुपास्महे ।

तत्तेजांऽस्माकं बुद्धीः श्रेयस्करेषु नियोजयेत् ॥

हे तेजःपुञ्ज ज्योतिःस्वरूप परमात्मन् ! ज्ञान और आनन्द
के देने वाले ! विजय कराने वाले ! प्रार्थना और स्तुति करने योग्य,

सबको उत्पन्न करने वाले ! सबका संहार करने वाले ! सबकी रक्षा करने वाले ! सबको प्रेरणा करने वाले ! अनन्त अपार आनन्दस्वरूप ज्ञानस्वरूप परमात्मन् ! हम तुम्हारा ध्यान करते हैं । तुम्हारे गुण हममें प्रकट हों और तुमको प्राप्त हों । जो तुम हो सो ही हम हैं और जो हम हैं सो ही तुम हो, ऐसे ऐक्य-भाव से हम तुम्हारा ध्यान करते हैं । तुम हमारी बुद्धियों को पवित्र और धर्मार्थ, काम और मोक्ष में प्रेरणा करो । हममें तेरी सच्ची भक्ति और प्रेम प्रकट होवे । सबको हम अपनी ही आत्मा समझें और हमारे शत्रु नाश को प्राप्त हों । भीतर काम, क्रोध इत्यादि और बाहर हमारी उन्नति में बाधक विघ्नकारक शत्रु सब नष्ट हों जिससे आनन्दपूर्वक हम आपको प्राप्त हों । धन्यवादपूर्वक हमारी आपको अनन्तवार नमस्कार हों । हमारी रक्षा करो । एक मात्र आप ही हमारे रक्षक हो !

॥ ओं शम् ॥

इस मन्त्र को जो श्रद्धा भक्ति पूर्वक जपेगा उसे अवश्यमेव भगवान् के दर्शन होंगे, मोक्ष मिलेगी, कल्याण होगा, सब पापों का नाश होगा, मनोकामना पूर्ण होगी । पुत्र के इच्छुक को पुत्र, धन चाहने वाले को धन, रोगी को नारोगता, विजय चाहने वाले को विजय प्राप्त होगी, सिद्धि चाहने वाले को सिद्धि, ऋद्धि चाहने वाले को ऋद्धि, विद्या चाहने वाले को विद्या, भक्ति चाहने वाले को भक्ति, प्रेम चाहने वाले को प्रेम, और प्रेम का आश्रय परमात्मा प्राप्त हो जावेगा, इसमें सन्देह नहीं !

गायत्री मन्त्र
गायत्री महामन्त्र
बाते स्मरण कर
१—ओंकार का
शुक्ल वर्ण है
२—भूर्भुवः स्वः
उष्णिक्, अक्षर
गायत्री विधि
३—गायत्री महामन्त्र
गायत्री छन्द
में विनियोग

‘ओं’ सर्व व
‘भूः’ सर्व क
‘भुवः’ दुख के
‘स्वः’ सब सु
‘तत्’ अतन्त
‘सवितः’ सर्वोत्त
‘वरेण्यम्’ है
‘मर्गो’ ज्योतिर्म
‘देवस्य’ देते
‘धीमहि’ ध्याते
‘धियः’ हमारी
यः, जो ऐ

गायत्री मन्त्र के जप से पूर्व स्मरण करने योग्य बातें
गायत्री महामन्त्र का जप प्रारम्भ करने से पूर्व निम्नलिखित
बातें स्मरण कर लेना चाहिये—

- १—ओंकार का ब्रह्मा ऋषि है, गायत्री छन्द है, अग्नि देवता है,
शुक्ल वर्ण है, और सर्व कर्मों के आरम्भ में विनियोग है।
- २—भूर्भुवः स्वः —इन व्याहृतियों का प्रजापति ऋषि है, गायत्री,
उष्णिक्, अनुष्टुप् छन्द है अग्नि, वायु, आदित्य, देवता है,
गायत्री विधि में विनियोग है।
- ३—गायत्री महामन्त्र का सविता देवता है, विश्वामित्र ऋषि है,
गायत्री छन्द है, अग्नि मुख है, जप, प्राणायाम और उन्नयन
में विनियोग है।

गायत्री का पद्यानुवाद

- ‘ओं’ सर्व व्यापक जो सबकी रक्षा करते हैं भगवान् ।
‘भूः’ सर्व को सत्तास्फूर्तिदाता सत्य स्वरूप महान् ॥
‘भुवः’ दुख के नाशक चिन्मय जिनका उत्तम ज्ञान स्वरूप ।
‘स्वः’ सर्व सुखदायक सुखमय परम आत्मा अलख अनूप ॥
‘तत्’ अनन्त हैं ! सर्वसार हैं !! जिनका कोई पार नहीं ।
‘सवितुः’ सर्वोत्पादक, रक्तक, प्रेरक, करे संहार तहो ॥
‘वरेण्यम्’ है वर्णन करने योग्य जगत् में उनका नाम ।
‘भर्गो’ ज्योतिमय पापों के भर्जन कर्त्ता पूरणकाम ॥
‘देवस्य’ देते हैं सबको दिव्य-प्रकाश शक्ति आनन्द ।
‘धीमहि’ ध्याते है हम सब पूण ब्रह्म श्री परमानन्द ॥
‘धियोः’ हमारी बुद्धि वृत्तियों को वह दीनबन्धु भगवान् ।
‘यः’ जो ऐसी महिमा वाले परमेश्वर हैं दयानिधान ॥

'नः' सभी हम जीव मात्र के घर में जिनका वासस्थान ।
 'प्रचोदयात्' वो करे प्रेरणा जिससे हम पायें उत्थान ॥
 आदि देव को श्रेष्ठ तेज जो उपका हम करते हैं ध्यान ।
 श्रेय कर्म में सदा हमारी बुद्धि लगावें वह भगवान् ॥

(रचयिता श्री आनन्द मुनि)

गायत्री और गायत्री का जप

सब मिल जपो मंत्र गायत्री, अपना जो चाहो कल्याण ॥ टेक ॥
 आदि मन्त्र मुनियों ने गाया, जपकर परम तत्त्व को पाया ॥
 तीन ताप का होय सफाया, इसको गाते वेद हैं चार ॥ १ ॥
 स्तुति ध्यान और होय प्रार्थना, सन्ध्या चार नित्य प्रति करना ।
 आवागमन का फिर कोई डर ना, जग में रक्खो सबसे प्यार ॥ २ ॥
 पंच अवसानों पर कुछ डटना, मन कर शान्त मन्त्र को रटना ।
 बाकी रक्खो और संभट ना, अर्थ का मन में करो विचार ॥ ३ ॥
 जप प्राणायाम उपनयन में भाई, है विनियोग मुनिवर कहै गाई ।
 अग्निमुख, सविता देव दर्शाये, ऋषि हैं विश्वामित्र उदार ॥ ४ ॥
 जो कहते अधिकार नहीं है, उनका सही विचार नहीं है ।
 'समानो मन्त्रः' यही वेद कही है, श्रुति का सत्य वचन है सार ॥ ५ ॥
 एहि विधि सब मिल जपो, जपाओ, राग द्वेष को दूर भगाओ ।
 परमानन्द मगन हो जाओ, आप में आप निहार ॥ ६ ॥

(रचयिता श्री सीताराम जी ब्रह्मचारी प्रज्ञाचक्षु)

श्री १०५

इस पद में श्री
 रूप से ब्रह्म भावन
 मतों में परमात्मा
 आदर करते हुए

दोहा — ओ३म्
 सत्य

ओ३म् निरज
 अच्युत गुरु

एक अखण्ड
 मैं, मैं, मैं,

राम आत्म
 ओत प्रोत

हरि नारायण
 कुण्डानन्ता

बिनवो तुमक
 तद्वत्त गणपति

श्री महाराज
 अनुभव किया था

किया है । (

संसार ।
जनहार ॥ १६२ ॥
नार ।
निकार ॥ १६३ ॥

या प्रीति ।
सुनीति ॥ १६४ ॥
के नाथ ।
तुम साथ ॥ १६५ ॥
नी होय ।
हिं कोय ॥ १६६ ॥
ही दोष ।
रड़े कोस ॥ १६७ ॥
नट कोय ।
न सोय ॥ १६८ ॥
क ससान ।
ह भगवान ॥ १६९ ॥
दृश्य तरंग ।
होवे भंग ॥ १७० ॥
हुत विस्तार ।
ना संसार ॥ १७१ ॥
पड़े में सुत ॥
बड़ा कपूत ॥ १७२ ॥
काल भुजङ्ग ।
देव असङ्ग ॥ १७३ ॥
कल्पना हीन ।
इन्द्रि विहीन ॥ १७४ ॥
मोह का फन्द ।
ण परमानन्द ॥ १७५ ॥

सदाचार

['सदाचार' नामक छोटी सी पुस्तिका श्री महाराज जी ने अपने समाधिस्थ होने से प्रायः २० दिवस पूर्व लिखवाई थी । इसमें कुछ उपदेश तो श्री महाराज जी के अपने ही हैं, कुछ अन्यान्य महापुरुषों के उपदेश उन्होंने लोक कल्याण की दृष्टि से इसमें सम्मिलित करा दिये हैं, जैसे ६२ से ७२ तक के, ७५ से ८७ तक के तथा ९३ से १०० तक के उपदेश आयुर्वेद के ग्रन्थ 'भाव प्रकाश' से उद्धृत हैं, और १४३ से आगे के कुछ उपदेश 'धम्मपद' से संकलित हैं । इन सभी उपदेशों में कहीं कहीं ऐसे स्थल भी आते हैं जो कुछ शंका उत्पन्न करते हैं या समझ में नहीं आते । यदि श्रीमहाराज जी अपने दृश्यमान रूप में 'सदाचार' छप जाने पर भी हमारे बीच होते तो हम उनसे इन शंकाओं का समाधान कर सकते थे । किंतु ऐसा नहीं है । अतः प्रस्तुत प्रकाशन में कहीं कहीं ऐसे स्थलों पर कुछ विद्वानों से प्राप्त टिप्पणियाँ, या अपनी ही समझके आधार पर कुछ स्पष्टीकरण पृष्ठ तल पर दे दिये गये हैं । यदि वे टिप्पणियाँ पाठकों की बुद्धि के अनुकूल हों तो उन्हें ग्रहण करें ।]

१. मनुष्य का पहला कर्त्तव्य है कि सद्गुरु की शरण में जावे और उनकी कृपा सम्पादन करने के लिये शुद्ध चित्त से उनकी सेवा करे ।

२. उन सद्गुरु के वचनों पर दृढ़ विश्वास रखे ।

३. एक ही मत मार्ग का अनुसरण करे ।

४. साधु सज्जन का सत्संग करे ।

५. निरन्तर सारासार का विचार करता रहे ।

६. अहर्निश परमात्मा का ध्यान करके उन पर दृढ़ आस्था रखे ।

७. एक परमात्मा को ही सर्वोपरि इष्टदेव मानना चाहिये। उसी की पूजा करनी चाहिये। सम्पूर्ण कर्म और जीवन का आधार समझना चाहिये। उसके पवित्र नाम का गुप्त जप करना चाहिये और उस पर पूर्ण विश्वास रखना चाहिये।

८. ईश्वर जीव और माया, सान्त अनादि हैं, और ब्रह्म अनन्त अनादि है, ऐसा मानना चाहिये।

९. मुक्ति अनन्त और अपार है, त्रिविध दुःख की अत्यन्त निवृत्ति और मरमानन्द की प्राप्ति रूप है।

१०. कर्मों के अनुसार उन्नति और अवनति माननी चाहिये।

११. अवतार, मूर्ति-पूजा, तीर्थ, श्राद्ध आदि पुरानी बातों को बुद्धि के अनुकूल हों तो मानना चाहिये।

१२. वेद शास्त्रादि प्रमाण ग्रन्थों की अच्छी बातों को बुद्धि के अनुकूल मानना चाहिये।

१३. सर्व विद्या और सनस्त पुस्तकों के पढ़ने में मनुष्य मात्र का अधिकार होना चाहिये।

१४. एक मनुष्य जाति है और जैसा करता है वैसा बनता है। जन्म से कोई अच्छा बुरा नहीं होता। इसमें जाति-पाँति ऊँच-नीच का कोई भेद न होना चाहिये।

१५. अध्यात्म विद्या, गीता, उपनिषद्, कबीर आदि महात्माओं की वाणी का नित्य पाठ करना चाहिये।

*वेद अपौरुषेय हैं। वेदों का यथार्थ भाव तो योगी ही जानता है। साधारण व्यक्ति की मान्यता तो भाष्य पर ही अवलम्बित है, और भाष्य भिन्न भिन्न आचार्यों के भिन्न भिन्न हुए हैं। सम्भवतः इसीलिये, सर्व साधारण की दृष्टि से ही, ऐसा लिखा गया है। (श्री सीताराम जी ब्रह्मचारी प्रज्ञाचक्षु)

१६. आलस्य

१७. सब काम

१८. चार बा

१९. ईश्वर

२०. भगवान्

२१. देश, त

२२. सब स

सम्बन्धों को

देखना चाहिये

२३. सबको

भेद भू

२४. प्यारा

२५. अपने

सकार करना च

२६. आप

२७. अपने

के साथ में कि

२८. सम्पूर्ण

चाहिये।

२९. प्रार

३०. बल

चाहिये।

३१. मन

१६. आलस्य छोड़कर आजन्म विद्या-अध्ययन करना चाहिये ।
१७. सब काम समय पर करने चाहिये ।
१८. चार बार सन्ध्या करनी चाहिये ।
१९. ईश्वर को और मौत को याद रखना चाहिये ।
२०. भगवान् के दर्शन करने के लिये योगाभ्यास करना चाहिये ।
२१. देश, नरेश और महेरा की भक्ति करनी चाहिये ।
२२. सब गतों को, उनकी पुस्तकों को, उनके अवतार, पीर पैगम्बरों को और अन्य देशों के मनुष्यों को समान दृष्टि से देखना चाहिये ।
२३. सबको अपना आपा समझना चाहिये और परस्पर का भेद भूटा समझना चाहिये ।
२४. प्यारा, हितकर, सच्चा और मधुर भाषण करना चाहिये ।
२५. अपने घर पर आये हुए अतिथि का यथायोग्य पूजन सत्कार करना चाहिये ।
२६. आपत्ति आने पर आनन्द में मग्न रहना चाहिये ।
२७. अपने साथ में की हुई दूसरे की बुराई को और दूसरे के साथ में किये हुए अपने गुण को भूल जाना चाहिये ।
२८. सम्पूर्ण कर्मों के फलों को परमात्मा के अर्पण करना चाहिये ।
२९. प्रारब्ध से पुरुषार्थ को बड़ा समझना चाहिये ।
३०. बलवान् की अपेक्षा निर्बलों को विशेष सुभीता देनी चाहिये ।
३१. मन, वाणी और कर्म से सबको सुख पहुँचाना चाहिये ।

३२. गोरक्षा के लिये उत्तम नसल उत्पन्न करके गौवं दुधार बनानी चाहिये और गोचर भूमि छुड़वानी चाहिये ।

३३. विषयों के अधीन न होना चाहिये ।

३४. अधिक उपाधि नहीं बढ़ानी चाहिये ।

३५. अधिक सन्तान न बढ़ानी चाहिए ।

३६. जिसे अपने लिये चाहे उसे दूसरे के लिये करना चाहिए ।

३७. हर एक काम सबकी भलाई के लिये पवित्र आकांक्षा से करना चाहिये ।

३८. दूसरों की बड़ाई सुनकर प्रसन्न होना चाहिये ।

३९. पड़ोसी का मान व आदर अपना जैसा करना चाहिये ।

४०. खान पान प्रेम और शुद्धताई के साथ मनुष्य मात्र का कर लेना चाहिए ।

४१. दो बार हाँडी का और एकबार चूल्हे का पका खाना चाहिये ।

४२. मोटा भोजन दूसरे को खिलाकर खाना चाहिए ।

४३. मोटा खाना और मोटा पहरना चाहिये, और बहुत भूख लगे तब खाना चाहिये, और बहुत नींद आये तब सोना चाहिये ।

४४. सात्विक पदार्थ जो बुद्धि इत्यादि को बढ़ावे, भोजन करना चाहिये ।

४५. विवाह स्वयंवर रीति से, जात-पाँत के विचार बिना, लड़का-लड़की के प्रेम होने पर उनकी इच्छानुसार होना चाहिये ।

४६. एक पुरुष को एक ही स्त्री के साथ विवाह करना चाहिए । आवश्यकता होने पर दूसरी से भी विवाह सम्बन्ध में जो पुरुष को अधिकार है वहाँ स्त्री को भी होने चाहिये ।

४७. हर विषय में
४८. स्त्रियों का
४९. पैर की जूत
५०. और इसके
५१. "स्वाम" इस
५२. स्त्री को प
५३. चाहिये । स्
५४. दृढ़ संक
५५. अच्छे
५६. पशुओं
५७. फल देने व
५८. तालाव
५९. व्याज
६०. विचारते हुए
६१. स्त्री
६२. करना चाहिए
६३. आव
६४. दस-
६५. बनाना चा
६६. होनी चाहिए
६७. मुझे
६८. समय मेरी
६९. भोजन बनवा
७०. वंका नहीं उ

४७. हर विषय में स्त्री पुरुषों के समानाधिकार होने चाहिये ।

४८. स्त्रियों का आदर मान करना चाहिये, उन्हें प्रणाम करना चाहिये, पैर की जूती समझने की जगह शिर का मुकुट समझना चाहिये और इसके स्मरणार्थ "गौरी शंकर सीताराम, राधेश्याम श्यामा श्याम" इस मन्त्र का जप करना चाहिये ।

४९. स्त्री को पतिव्रत धर्म और पुरुष को नारीव्रत धर्म पालन करना चाहिये । स्त्री-पुरुषों को ऋतुगामी होकर उत्तम सन्तान पैदा करने का दृढ़ संकल्प होना चाहिये ।

५०. अच्छे २ लाभदायक, पूज्य उत्तम वृक्ष लगाने चाहिये । वृक्षों की, पशुओं की, मनुष्यों की, औषधियों की उत्तम नसल बढ़ाकर प्रभूत फल देने वाले बनाने चाहिए ।

५१. तालाब, कुआ, मन्दिर, प्याऊ आदि बनवाने चाहिए ।

५२. व्याज थोड़ा लेना चाहिए । देश और धर्म के लाभ को विचारते हुए व्यापार करना चाहिए ।

५३. स्त्री*, धन, गृह, वस्त्रादि से दूसरे की बहुत जरूरत को पूरा करना चाहिए ।

५४. आवश्यकताएँ जितनी कम हो सकें कम करना चाहिए ।

५५. दस-दस और पाँच-पाँच गाँवों के मध्य एक एक आश्रम बनाना चाहिए और वहाँ ही जंगल में लड़के लड़कियों की पाठशाला होनी चाहिए ।

मुझे ध्यान आता है कि श्री महाराज जी ने इस उपदेश को लिखाते समय मेरी शंका पर कहा था कि 'कोई अतिथि आता है तो उसे स्त्री से भोजन बनवाकर देते हैं कि नहीं ।' (श्री भूमानन्द जी) अतः इस पर कोई शंका नहीं उठनी चाहिये ।

५६. पन्द्रह-सोलह, अठारह-बीस वर्ष तक उनके आचार की, ब्रह्मचर्य की पूरी देखभाल के साथ रक्षा करनी चाहिए ।

५७. कभी २ नाचना और गाना भी चाहिए ।

५८. वृद्ध माँ बाप की और दुःखी पड़ोसी तथा मनुष्य मात्र की सेवा करनी चाहिए ।

५९. मुकुटदार टोपी, टोप, पाग इत्यादि सूर्य की किरणों से आँखों की रक्षा करने वाला शिरोपा पहनना चाहिए ।

६०. बालकों को खेल के द्वारा शिक्षा देनी चाहिये । उनके दिमाग पर बहुत दबाव या बोझ न डालना चाहिये ।

६१. सबको वाँसुरी बजानी चाहिये । सबको हरदम खुश और सुरम्य रहना चाहिये ।

६२. बलवान् के साथ लड़ाई नहीं करनी चाहिए ।

६३. सिर पर अधिक बोझ न धरना चाहिए ।

६४. शरीर पर कभी बुहारी की धूल न पड़ने देना चाहिए ।

६५. नखों से पृथ्वी न कुरेदनी चाहिए, न हाथों से तिनका ही तोड़ना चाहिए । दोनों हाथों से सिर न खुजाना चाहिए ।

६६. उदय होते, अस्त होते और मध्याह्न सूर्य को न देखना चाहिए । पानी में सूर्य का प्रतिबिम्ब पड़ा हो तो उसको न देखे । इन्द्र धनुष को न देखे न दूसरे को दिखाना चाहिए ।

६७. मल मूत्रादि वेगों को न रोकना चाहिए ।

६८. काम क्रोधादि मन के वेगों को रोकना चाहिए ।

६९. इन्द्रियों को न पीड़ित करे न उनका बहुत लाड़ ही करना चाहिए ।

७०. पैर पर पैर रखकर न हिलाना चाहिए ।

७१. देहरी पर बैठ कर खाना नहीं चाहिए । रात्रि को देव मन्दिर में, अथवा वृत्त के नीचे अकेले न सोना चाहिए ।

७२. दिन में मल-मूत्र उत्तर को मुख करके, रात्रि को दक्षिण, को, दोनों संध्याओं में उत्तर को मुँह करके, और गड़बड़भाला में जिधर को चाहे उधर को मुँह करके मलमूत्र त्यागना चाहिए ।

७३. जो कुछ संसार में होता है वह भावी के अधीन है । ऐसी अवस्था में चिन्ता न करनी चाहिये । अडोल चित्त होना, सिर आई को शान्ति से सहना, भगवान् के साथ प्रेम करना, यही जीवन का मुख्यउद्देश्य होना चाहिये ।

७४. इश्वर की उपासना जीवन और प्रकृति की उपासना मरण समझना चाहिये । विद्या जीवन अविद्या मरण, सत्य जीवन भूठ मरण, धर्म जीवन आर अधर्म मरण, परोपकार जीवन और स्वार्थ मरण, पुरुषार्थ जीवन और आलस्य मरण, ब्रह्मचर्य्य जीवन और व्यभिचार मरण, मित्रता जीवन और शत्रुता मरण, वीरता जीवन और कायरता मरण, सत्संग जीवन और कुसंग मरण, सन्तोष जीवन और लोभ मरण, अहिंसा जीवन और हिंसा मरण, कृतज्ञता जीवन और कृतघ्नता मरण समझना चाहिये । प्रत्येक मनुष्य जीवन से प्रेम रखता है और मौत से डरता है । इसलिये जीवन के साधनों में रुचि आर मृत्यु के साधनों से घृणा करना चाहिये ।

७५. श्रेष्ठ मनुष्यों के साथ मित्रता करे और संसर्ग भी उन्हीं का करे । नीच मनुष्यों का संग छोड़ देना चाहिये ।

७६. देव, राजा, वृद्ध, विद्वान्, अतिथि, इनकी सेवा करे ।

७७. याचकों को निराश कर खाली हाथ न जाने दे ।

७८. किसी की अवज्ञा न करे। गुरु व पूज्य लोगों के पास सदा सन्नता से बैठे। पाँव पसार कर बैठना आदि अयोग्य कार्य न करे।

७९. अपकार करने वाले मनुष्यों के साथ भी सदा उपकार करे। सबको आने समान जाने और द्वेषी से दूर रहे। कोई मनुष्य हमारा बैरी है अथवा अमुक मनुष्य का मैं बैरी हूँ ऐसा किसी प्रकार प्रकाशित न करे।

८०. किसी स्थान में अपना अपमान हुआ हो और अपने ऊपर स्वामी का स्नेह न हो तो इसको भी प्रकाशित न करे।

८१. पानी में अपना प्रतिबिम्ब न देखे।

८१. जग्न होकर जल में न धुसे। जिसकी गहराई विदित न हो, जिस जल में मच्छादि हिंसक जीव रहते हों, उसमें भी न धुसे।

८२. बोलने के समय थोड़ा, हितकारी, प्रसंग के अनुसार, मीठा वचन बोले।

८४. अधिक रस वाले घी सहित और हितकारी पदार्थों का प्रमाण अनुसार भोजन करे। रात्रि में दही न खावे, बिना नमक के कभी दही न खावे, मूँग की दाल, शहद, घी शर्करा के बिना दही न खावे।

८५. मनुष्यों के अभिप्राय को जान कर, जो मनुष्य जिस प्रकार से प्रसन्न हो उसी प्रकार बोलें, क्योंकि अन्य मनुष्यों को प्रसन्न करना ही चतुरता है।

८६. जिस प्रकार सहाय बिना मनुष्य सुखी नहीं होता उसी प्रकार सब के ऊपर विश्वास करने वाला अथवा सबके ऊपर सन्देह रखने वाला भी मनुष्य सुखी नहीं होता।

८७. कभी उद्योग करने से खाली नहीं बैठना चाहिये। किसी के

सफलीभूत उद्योग को देख कर उस पर ईर्ष्या न करनी चाहिये । जो पुरुष ऐश्वर्यवान् के ऐश्वर्य को देख कर दुःख मानते हैं वे सदैव दुःखी रहते हैं । विद्वान् को यह विचार करना चाहिये कि अमुक पुरुष को किस प्रकार यह ऐश्वर्य प्राप्त हुआ है । उसी विद्या और उसी उपाय से हम भी धनोपार्जन करके अपना यश प्रकाश करें । किसी के संचित किये हुए धन की इच्छा न करें ।

८८. खिड़की आदि वाले हवादार मकान बनाने चाहियें ।

८९. सुखियों से मित्रता, दुखियों पर दया, साधुओं से मुक्ति और दुर्जनों से उपेक्षा करनी चाहिये ।

९०. ग्रह भूत और देवताओं के बहान और पाखण्ड को नहीं मानना चाहिये ।

९१. वर्षा में धूप में छत्री धरण करके चले । रात में भय के समय हाथ में लकड़ी लेकर चले । जूते पहने रहे देह की रक्षा करे । आगे को चार हाथ पृथिवी देख कर चले ।

९२. जहाँ अग्नि का समूह हो वहाँ न जाय, संदेह-युक्त वाहन पर न चढ़े । उन्मत्त हाथी के पास न जाय ।

९३. श्रेष्ठ मनुष्यों की समा में सन्मुख मुँह करके खाँसी, श्वास, ढकार, जँवाही और छींक नहीं लेवे । समा में बैठ कर कभी नाक नहीं कुरेदे ।

९४. उकड़ कभी न बैठे, अधिक देर तक घुटने ऊँचे करके नहीं बठे ।

९५. अप्रिय वस्तु को निरन्तर न देखे । हाथों से केशों को नहीं हिलावे ।

६६. दो पूज्य मनुष्य अथवा स्त्री-पुरुष खड़े हों तो उनके बीच में होकर नहीं जाय ।

६७. शत्रु अथवा वेश्या का अन्न कभी न खाय ।

६८. किसी का वृथा प्रतिभू न बने । किसी का वृथा साक्षी न हो ।

६९. किसी की धरोहर न रखे और जहाँ जूवा हो उस को दूर से छोड़ दे ।

१००. स्त्री को अलग* शय्यापर न सुलावे । पुरुषों के स्थान में स्त्री को न रखे और छिद्र वाली फटी दूटी शैया पर शयन न करे ।

१०१. किसी की निन्दा न करे ।

१०२. सब ब्रह्माण्ड को अपना शरीर और उसमें सत्तास्फूर्ति दाता परमात्मा को अपना आत्मा समझे ।

१०३. सुख और भलाई परमात्मा की तरफ से दुःख और बुराई अपनी गलती से समझे ।

१०४. मर के मैं परमात्मा को ही प्राप्त होऊँगा ऐसा दृढ़ निश्चय रखे ।

१०५. जहाँ तक हो किसी को बुरा न समझे न कहे ।

१०६. जैसा कुछ भिल जाय उसी में संतुष्ट रहे ।

१०७. अपने को जो सुन्दर और प्यारी वस्तु रुचे उसको परमात्मा का प्रसाद समझ कर ग्रहण करे ।

* यहाँ 'अलग' का अर्थ 'अपनी सुरक्षात्मक दृष्टि से दूर' समझना चाहिये (श्री स्वा० शंकरानंद जी) । अन्य अर्थ लगाने पर तो यह उपदेश सदाचार के ही ४९ वें उपदेशों के तथा अन्य उपदेशों के विरुद्ध पड़ेगा जहाँ ब्रह्मचर्य पर बल है ।

१०८. सबेरे उठते ही सबका 'ॐ ॐ जय श्रीकृष्ण कां' कह कर सत्कार करो ।

१०९. गायत्री मंत्र से सूर्य के सामने खड़ा हो करके स्तुति, प्रार्थना और उपासना करो ।

११०. उपदेश और अच्छी सलाह जहाँ से मिले आदर के साथ स्वीकार करो ।

१११. सिद्धि की दो कुञ्जियाँ हैं, बुद्धि और आशा संयुक्त उद्योग करना ।

११२. किसी बात में जल्दी न करो । जब समझ लिया तो दृढ़ संकल्प करो, करने के पूर्व उस काम की हानि लाभ भर्ता भाँति मन में तोल लो फिर उसको करो, परिणाम चाहे जो हो ।

११३. किसी काम में हाथ डालने के पहले अपने पुरुषार्थ को तोल लो । बहुत ऊँचे चढ़ जाने से गिर जाने का डर, और बहुत नीचे पड़े रहने से फुचल जाने का भय होता है ।

११४. मालिक पर भरोसा करो, पर ऊँट के पाँव बाँध कर रक्खा* ।

११५. किसी कठिन काम के करने में हिम्मत हार देना कायरता का लक्षण है । यदि उसे दूसरे कर सकते हैं तो तुम क्यों नहीं कर सकते । परमात्मा पर दृढ़ विश्वास रख कर आदमी असम्भव काम कर सकता है । असम्भव का शब्द केवल मूर्खों के कोप में भिलता है ।

११६. स्वतन्त्र और स्वाधीन वही कहा जा सकता है जो

(३) ईश्वर पर विश्वास अवश्य करो, किन्तु अपने कर्तव्य के प्रति भी जागरूक तथा सावधान बने रहो ।

अपने काम के लिये दूसरे का आश्रित नहीं है ।

११७. एक से एक मिल कर ग्यारह होते हैं । अच्छे और नीति संयुक्त कामों के लिये मिलने का नाम 'एका' है और नीति-विरुद्ध कामों के लिये मिलने का नाम "गुट्ट" है ।

११८. न्याय में कोमलता मिली रहने वह सोना और सुगन्ध हो जाता है ।

११९. जो कोई अपनी उन्नति या कीर्ति चाहता है तो उसको इन अवगुणों से बचना चाहिये । अधिक सोना, औघना, डर, क्रोध, आलस्य और टालमटोल ।

१२०. राज भक्ति का भारी दर्जा धर्म शास्त्र और नीति दोनों में है । राजा या बादशाह के द्रोहों का लोक परलोक दोनों बिगड़ते हैं ।

१२१. घमण्ड या अहंकार मूर्खता का चिह्न है ।

१२२. जो दूसरे की निन्दा नहीं करता, जिसको अपनी प्रशंसा नहीं सुहाती दूसरे की प्रशंसा से हर्ष होता है, जो दूसरों को सुख पहुँचाता है, छोटी से कोमलता तथा दया भाव से और आदर सत्कार के साथ वर्तता है तथा खेल में भी किसी के साथ जो चालाकी नहीं करता वह महा पुरुष है ।

१२३. मौलाना रुम ने फरमाया है कि मैं कितने ही जन्म भोग चुका हूँ ।

१२४. आधी से ज्यादा दुनियाँ पुनर्जन्म में विश्वास करती है ।

१२५. सज्जनों के पड़ोस में रहो । भली कामनाओं को मन में

बसाओ और बुरी कामनाओं को निकालो । शान्त स्वभाव रहो । जब कोई दोष लगावे तो अपने मन को न बिगाड़ो । सम्पत्ति में फूल न जाओ और विपत्ति में पिचक न जाओ दूसरे का माल बेईमानी से मत लो । जिनसे तुम्हारा जी नहीं मिलता उनसे दूर रहो । किसी को कथनी या करनी से धोखा न दो ।

१२६. पक्के धर्मी की बोली मीठी* होती है । क्योंकि जो अच्छे काम की कठिनता को जानता है वह अवश्य सँभल कर बोलेगा ।

१२७. आदमी अपना दर्पण आप है । अपनी आँख आप खोलो नहीं तो कष्ट खोलेगा ।

१२८. भूठी खबर न उड़ाओ बुरे से मेल न करो । तुम्हारे शत्रु का बिचरा हुवा बैल मिले तो उसके घर पहुँचा दो । परदेशी को न मताओ । जब खेत कटो तो थोड़ा सा बटोही के लिये भी छोड़ दो । अपने पड़ोसी के साथ अत्याचार न करो । मजूर की मजूरी रात भर न रक्खो । बहरे की ठठोली न उड़ाओ । अंधे की राह में ठोकर खाने को डेला न रक्खो । मुखबिरी न करो । चुगली न खाओ । अपने पड़ोसी को बुरे काम करने से डाटो । किसी को छोटी निगाह से न देखो । लग्न मुहूर्त का विचार मत करो ।

१२९. बूढ़ों का खड़े होकर सत्कार और सब प्रकार प्रतिष्ठा करो । धरती को बेच न डालो ।

१३०. प्रेम आकर्षण या खँच शक्ति का नाम है जिससे यह सब रचना ठहरी हुई है और मालिक आप प्रेम स्वरूप हैं । अपने से बढ़

*पाठान्तर 'धीमी' ।

कर किसी को चाहना प्रेम है । जो अपने से बढ़ कर मालिक को चाहता है उसको तन, मन, धन अपने प्रीतम पर वार देने में क्या शोच विचार होगा ।

१३१. तीन बात जितनी बढ़ाओगे बढ़ेंगी—भूख, नाद और डर ।

१३२. तीन की महिमा तीन जानते हैं—जवानी की बूढ़े, अरोग्यता की रोगी और धन की निर्धन ।

१३३. तीन बातों से बचो सब तुम्हें पसन्द करेंगे । किसी से कुछ न माँगो, किसी को बुरा मत कहो, और किसी के रुहमान के बिना बुलाये पुछलंगू न हो ।

१३४. तीन के बिना तीन नहीं रहते—धन बिना वाणिज्य के, विद्या बिना शास्त्रार्थ के और राज्य बिना शासन के ।

१३५. बूढ़ों का आदर करना, छोटों को सलाह देना, बुद्धिमानों से सलाह लेना, मूर्खों के साथ न उलझना ।

१३६. चार तरह के आदमी होते हैं—मक्खीचूस, कंजूस, उदार और दाता । जो न आप खाय न दूसरे को दे वह मक्खीचूस, आप खाय पर दूसरे को न दे वह कंजूस, आप भी खाय और दूसरों को भी दे वह उदार, और जो आप न खाय परन्तु दूसरों को दे वह दाता कहलाता है । यदि दाता नहीं बन सकते तो उदार तो अवश्य ही होना चाहिये ।

१३७. संकट में मित्र की, रण में शूर की, ऋण में साहू की,

ते में स्त्री की, और

१३८. खुशी,

१३९. चार

निकली बात, बीत

१४०. जो ज

जो ज

१४१. चार

दिखलाती हैं—श

१४२. पाँच

और दुष्ट ।

१४३. मन

से, लालची क

१४४. बु

पकड़ा हुआ

है और पाप

१४५. त

करता है वे

१४६.

और बुद्धि

शान्ति है

१४७

टोटे में स्त्री की, और रोग-शोक में नातेदारों की, पहचान होती है ।

१३८. खुशी, रंज, रोजी, मौत ये अपने आप आती हैं ।

१३९. चार जाकर फिर नहीं आती-छूटा हुवा तीर, मुँह से निकली बात, बीती हुई उमर, और टूटा हुआ दिल ।

१४०. जो जाके न जाय वह बुढ़ापा देखा ।

जो जाके न आय वह जवानी देखी ॥

१४१. चार चीजें पहले निर्बल दीखती हैं और आगे जोर दिखलाती हैं-शत्रु, आग, रोग और ऋण ।

१४२. पाँच के संग से बचना चाहिये-भूटा, मूर्ख, कंजूस, डरपोक और दुष्ट ।

१४३. मनुष्य को चाहिये क्रोध को प्रेम से जीते, बुराई को भलाई से, लालची को उदारता से, और भूटे को सत्य से ।

१४४. बुढ़ापे तक स्थिर रहने वाली भलाई सुखदाई है, दृढ़ता से पकड़ा हुआ विश्वास सुखदाई है, ज्ञान का प्राप्त करना आत्मदायक है और पापों से बचना सुखदाई है ।

१४५. जो अनहुई बात को कहता है और जो हुई से इन्कार करता है वे दोनों नरकगामी हैं ।

१४६. जिसका मन संयम में है उसी ही में शक्ति, शान्ति, प्रेम और बुद्धि है । उस ही ने सम्पूर्ण जगत् को जीता है जिसमें पूर्ण शान्ति है ।

१४७. परिहृत चिन्ता, भय, शोक, मोह, निराशा, और धृणा,

इन सब से दूर रहता है ।

१४८. इन्द्रियों का निग्रह करना उत्तम है ।

१४९. शरीर का संयम अच्छा है, वाणी का संयम उत्तम है, विचारों का संयम उत्तम है, इसी तरह प्रत्येक बात में संयम उत्तम है । जो सब बातों में संयम कर लेता है वह सब दुःखों से छूट जाता है ।

१५०. जो कुछ मिल जावे उसे तुच्छ न समझो । कभी दूसरों से ईर्ष्या मत करो । जो औरों से ईर्ष्या करता है उसे शान्ति नहीं मिलेगी ।

१५१. जो अपने को नाम व रूप से भिन्न समझता है वह भिथ्था पदार्थों के लिये शोक नहीं करता और वह निस्सन्देह भिक्कु है ।

१५२. वह भिक्कु जो करुणा से काम करता है वह बुद्ध सिद्धान्त के मानने में अचल है ।

१५३. पाँच^१ को छिन्न भिन्न करदे पाँच^२ को छोड़ दे, पाँच^३ से ऊपर होजाये भिक्कु ! जो इत पाँच वेड़ियों से बच निकला है वह हो पार गया है ।

१५४. बिना ज्ञान के ध्यान नहीं और बिना ध्यान के ज्ञान नहीं । वह जिसको ज्ञान व ध्यान दोनों हैं निर्वाण के निकट है ।

१५५. जिसका चित्त एकाम्र है, और जिसने संसार के प्रलोभनों को छोड़ दिया है वह शान्त कहलाता है ।

१५६. जो इच्छाओं के दास हैं वे कामनाओं के प्रवाह के

१. काम, क्रोध, लोभ, माह, मद । २. पाँच कोप । ३. पाँच प्राण ।

साथ इस तरह नीचे चले जाते हैं जिस तरह मकड़ा अपने बनाए हुए जाले के साथ। बुद्धिमान पुरुष अन्त में इसे फाट कर संसार से विरक्त हो जाते हैं।

१५७. जो सामने है उसे छोड़ दो^१ जो पीछे है उसे छोड़ दो^२। और जो मध्य में है उसे भी छोड़ दो^३।

१५८. जिस तरह वर्षा दूटे हुए छप्पर में घुस जाती है उसी तरह मलीन हृदय में विषय प्रवेश कर जाते हैं।

१५९. जो हमारे जीवन जगत् का दाता है, वही हमारा पिता रक्षक भी है, वह महान् तेजस्वी एवं महान् शासक है।

१६०. वे ही लोग मुक्त हैं जिन्होंने अपनी इच्छाओं को जीत लिया है। बाकी लोग देखने में स्वतन्त्र मालूम होते हैं मगर वास्तव में वह बन्धन से जकड़े हुए हैं।

१६१. फिजूल खर्च करने वाले के पास जैसे धन नहीं ठहरता ठीक इसी तरह मांस खाने वाले के हृदय में दया नहीं रहती।

१६२. जिसे उचित अनुचित का विचार है वही वास्तव में जीवित है, पर जो योग्य-आयोग्य का खयाल नहीं रखता उसकी गिनती मुर्दों में की जायगी।

१६३. किसी को अपने से प्रेम है तो उसको पाप की ओर जरा भी न झुकना चाहिये।

१६४. झूठ और निन्दा के द्वारा जीवन व्यतीत करने से तो फौरन ही मर जाना उत्तम है, क्योंकि इस तरह मर जाने से नेकी का फल मिलता है।

१ भविष्य की चिन्ता और २ भूतकाल का शोच छोड़ कर ३ वर्तमान में असंग होकर अपने कर्तव्य का पालन करो।

१६५. जो लोग अपने मित्रों के दोषों की खुल्ले आम चर्चा करते हैं, वे अपने दुश्मनों के दोषों को भला किस तरह छोड़ेंगे।

१६६. संसार में त्यागी पुरुषों से भी बढ़कर संत वह है जो अपनी निन्दा करने वालों की कटु वाणी को सहन कर लेता है।

१६७. काम के समस्त वन को काटो डालो, कास के वन से भय उपस्थित रहता है।

१६८. संसार को छोड़ कर तपस्वी हो जाना कठिन है, संसार को भोगना भी कठिन है, आश्रम का जीवन भी कठिन है, घर दुःख-दाई है, बराबर वालों के साथ रहना भी दुःखप्रद है। दुःख सहित भ्रमणशील भिक्षुक ही सबसे श्रेष्ठ है।

१६९. यदि मनुष्य परदोष-दृष्टि रखता है और स्वयं सदा अपराध करने का वृत्ति रखता है तो उसके विकार बढ़ेंगे और वह मनः विकारों के दमन करने से बहुत दूर है।

१७०. महान् पुरुष जो उपकार करते हैं, उसका बदला नहीं चाहते। भला संसार जल बरसाने वाले बादलों का बदला किस तरह चुका सकता है।

१७१. योग्य पुरुष अपने हाथों से महन्त करके जो धन जमा करते हैं, वह सब दूरों के लिये ही होता है।

१७२. हार्दिक उपकार से बढ़कर कोई चीज नहीं।

१७३. जब जीव तुम्हें जान जाता है, तब उसके लिये कोई बेगाना नहीं रहता। तब उसके लिये सब द्वार खुल जाते हैं। हे प्रभो! मुझे वर दो कि मैं अनेकत्व के बीच में एकत्व के अनुभवानन्द से कभी वंचित न रहूँ।

संसार से सब
में धारण करे
आत्मा का चिन्त
आत्मा
आत्मा
आत्मा
आत्मा
आत्मा
आत्मा
आत्मा

और शम्भु

समुद्र* ज
समुद्र में जब
वही देशकाल
निर्गुण उस
है तथा दूसरे
सर्वव्यापक
पिणी भगव
विद्यमान है
का विस्तार
भिन्न भिन्न

*ब्रह्म

समुद्र तथा

यह संज्ञा से सब मनुष्यों के लिये सदाचार कहा है। इसको अपने में धारण करो, और अपने चारों ओर बाहर और भीतर परमात्मा का चिन्तन करते हुए वहाँ गीत गाओ।

समात्मा	परमात्मा	विश्वात्मा	विश्वस्वरूप।
ब्रह्मात्मा	सर्वात्मा	सूर्यात्मा	ज्योतिस्वरूप।
अखण्डात्मा	पूर्णात्मा	ज्ञानात्मा	ज्ञानस्वरूप।
सुखात्मा	चिदात्मा	सदात्मा	सत्यस्वरूप।
भावात्मा	भवात्मा	शून्यात्मा	शून्यस्वरूप।
ज्ञातात्मा	ज्ञेयात्मा	ध्येयात्मा	ध्यानस्वरूप।

ओं शम्, ओं स्वं ब्रह्म, ओं शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

सद्गुरु का उपदेश

समुद्र* जब स्थिर रहता है तब उसे ब्रह्म कहते हैं, और उसी समुद्र में जब लहर उठती है तब उसी को शक्ति या माया कहते हैं, वही देशकाल निमित्त स्वरूप है। सविशेष सगुण और निर्विशेष निर्गुण उसके दो रूप हैं। पहले रूप में वह ईश्वर जीव और जगत् है तथा दूसरे रूप में वह अज्ञात और अज्ञेय है। सर्वशक्तिमत्ता, सर्वव्यापकता एवं अनन्त दया उसी जगत्-जननी जगदम्बा प्रेमस्वरूपिणी भगवती के गुण हैं। प्रत्येक व्यक्ति के पीछे अनन्त शक्ति विद्यमान है। एक कण-बिन्दु कृष्ण, बुद्ध, स्त्रीष्ट आदि और जगत् का विस्तार एक बिन्दु को प्रकाशित करता है। एक आत्मा ब्रह्म भिन्न भिन्न सर्व उपाधियों में प्रकाशित होता है।

*ब्रह्म और जगत् की एकता दिखाने के लिये यहाँ उनकी उपमा क्रमशः समुद्र तथा उसकी लहरों से दी है।

बड़प्पन की ढाँग, दलबन्दी और ईर्ष्यादि सदा के लिये छोड़ दो । पृथ्वी की भाँति सहिष्णु हो जाओ । लड़कपन की चंचलता और युवापन की गर्भारता दोनों मिलाकर सबके साथ प्रेम से रहो । आत्मा के स्वरूप का व्यक्त और कभी अव्यक्त भाव होता है । आत्मा मानो बादलों से ढके सूर्य की न्याई है । हृदय को समुद्र के समान महान् बना डालो, क्षुद्र भावों को पार कर जाओ, अमङ्गल के आने पर भी आनन्द में उन्मत्त हो जाओ ।

संसार को एक चित्र की भाँति देखो, जगत् में कोई तुमको विचलित नहीं कर सकेगा । अहंता को दूर कर दृढ़ता से खड़े हो जाओ । काम, काञ्चन, मान और यश को छोड़कर ईश्वर को दृढ़ता से पकड़ो ।

विधि-निषेध के धेरे में पड़े रहने से आत्मा का प्रसार नहीं होता । जो जितनी आत्मानुभूति का प्रकाश कर सकता है उसके उतने ही विधि-निषेध कम हो जाते हैं । दूसरों की सेवा शुभ कार्य है । इसी के प्रभाव से चित्त शुद्ध होता है इसी के प्रभाव से सबके भीतर बैठे भगवान् प्रकाशित होते हैं । आदेश के अनुसार संगठन करने का उद्योग करना, धर्म का यही लक्ष्य है, यही उद्देश्य है । आदर्श धार्मिक क्षमा, धृति, शौच, शान्ति उपासना और ध्यान में परायण आदर्श का अवलम्बन विस्तार ही जीवन और संकीर्णता ही मृत्यु है । जहाँ प्रेम वहीं विस्तार, जहाँ स्वार्थता वहीं संकोच । अतएव प्रेम ही जीवन का एक आधार है । अवश्य अहंतुक्त प्रेम करना चाहिये, वही एकमात्र जीवन-गति का नियमन करने वाला है ।

जिस कर्म से जीवों के मन में धीरे-धीरे ब्रह्म भाव के उदय होने में सहायता पहुँचे वही कर्म उत्तम है। यदि किसी को सुभीता देना हो तो बलवान् की अपेक्षा निर्बल को अधिक सुभीता दो। सदा दाता बनो, अपना सर्वस्व दे डालो पर बदले में कुछ न चाहो। दूसरों से प्रेम करो, सहायता करो, सेवा करो, तुमसे जो कुछ बने दूसरे के लिए करो, पर सावधान ! बदले में कुछ न चाहो। व्यक्तिगत, देशगत, कालगत, कर्माकर्म का विचार कर साधन करो, सार यही है।

“परोपकाराय सतां हि जीवनम्”

वेदान्त सिद्धान्त

(श्री स्वामी परमानन्द जी महाराज का उपदेश)

जो कुछ यह नाना रूप प्रतीत हो रहा है वह वस्तुतः एक है। वास्तव में एक ही परमार्थ सत्ता असली हस्ती है जिसको ब्रह्म वा परमात्मा कहते हैं। वह शुद्ध चैतन्य व शुद्ध ज्ञान है, अर्थात् वह जानने वाला नहीं किन्तु स्वयं ज्ञान है। वह निर्गुण है, वह आप ही है। जो कुछ है उसमें, और कुछ नहीं। इसीलिये वह निर्गुण व निर्विशेष है। पर यदि वह सत् हस्ति एक है और कुछ नहीं तब यह सारा प्रपंच कहाँ से आ गया जिसको हम अपनी चारों ओर देखते हैं, और जिसमें हम अपनी स्वयं एक अलग सत्ता रखते हैं ? तो उत्तर यह है कि ब्रह्म के साथ अनादि से एक शक्ति है जिसको माया व अविद्या कहते हैं। यह सारा प्रपंच उसी से दिखलाया जाता है। यह शक्ति न सत् कहलाती है, क्योंकि सत् केवल ब्रह्म है, न असत्, क्योंकि किसी न किसी भाँति इस प्रपंच को प्रकट कर देती है। वस्तुतः

यह इस भ्रान्ति का अनिर्वचनीय कारण है जिससे हम अपने चारों ओर जड़-चैतन्य की विविध सृष्टि देख रहे हैं। ब्रह्म इस शक्ति के द्वारा इस प्रकार जड़-चैतन्य की अनेक सृष्टि को दिखला देता है जैसे कोई मायावी इन्द्रजालिक अपनी माया शक्ति से अनेक प्रकार की जड़ चेतन वस्तु प्रकट कर दिखला देता है जो वस्तुतः भ्रान्ति मात्र होते हैं। शक्ति रूप से जहाँ तक माया का सम्बन्ध ब्रह्म के साथ होता है वहाँ तक हम ब्रह्म को जगत् का उपादान कारण कह सकते हैं अर्थात् स्वरूप से निमित्त और माया स्वरूप से उपादान। पर माया ब्रह्म की ही अनिर्वचनीय शक्ति है, उससे भिन्न पदार्थ नहीं है। माया शब्दल ब्रह्म ही जगत् का अभिन्न निमित्तोपादान कारण है। माया के सम्बन्ध में प्रायः ब्रह्म को ईश्वर कहते हैं। माया ईश्वर के अतीत होकर क्रमशः इन भिन्न-भिन्न रूपों में परिणत हुई है जिनका समुदाय यह जगत् है और जो अपने प्रति नियत नाम और रूप से निखरे जाते हैं। भूत, भौतिक शरीर और इन्द्रिय ये सब उसी का परिणाम हैं। ये सारे शरीर जो एक दूसरे से भिन्न-भिन्न हैं इन सब में एक ही अभिन्न ब्रह्म है जो माया कृत ज्ञान और कर्म के भेद से प्रति व्यक्ति भिन्न-भिन्न प्रतीत होता है। वही जीव है। जीव का परमार्थ रूप ब्रह्म है और वह एक अद्वितीय ब्रह्म है तथा प्रति शरीर ज्ञान और कर्म की भिन्न-भिन्न शक्तियों से एक जीव दूसरे से भिन्न किया जाता है। ये शक्तियाँ माया का कार्य हैं इसीलिये मिथ्या हैं। यह जगत् इन्हीं भिन्न-भिन्न जीवों से भरा हुआ है। पर न यह जीव और न उसकी उपयोगी वस्तुएँ परमार्थ सत् हैं। क्योंकि यह दोनों माया से सम्बन्ध रखते हैं, माया से दिखलाये जाते हैं, सो इसीलिये

मिथ्या हैं। इसी प्रकार यह सारा भेद मिथ्या है, वस्तुतः नहीं है और प्रतीत होता है। इसी मिथ्या दृष्टि ने अपना परमार्थ स्वरूप भुलाया हुआ है।

अब यह भूला हुआ आत्मा माया से परे व माया के भी असली स्वरूप को नहीं जानता है, इसका अपना परमार्थ स्वरूप इस माया के परदे से ढका है। यह अपने आप को ब्रह्म समझने की जगह उन उपाधियों शरीर इन्द्रियों को अपना आप समझ रहा है जो माया का कार्य है। इस प्रकार यह शरीर इन्द्रियों मन को ही अपना असली स्वरूप जानकर इतकी सारी अवस्थाओं को अपनी अवस्था मानता हुआ कहता है कि 'मैं मोटा हूँ', 'मैं दुबला हूँ', 'मैं अन्धा हूँ', 'मैं बहरा हूँ', 'मैं शोक में हूँ', 'मैं चिन्ता में हूँ', 'मेरा जन्म अमुक सम्वत् में हुआ', 'अब मैं बूढ़ा हो गया हूँ', 'मैं रोगी हूँ', 'मैं मर जाऊँगा', इत्यादि। सो यह आत्मा परमार्थतः शुद्ध ज्ञानस्वरूप है न कि जानने वाला; और अनन्त है। इस अभ्यास के कारण यह एक सीमा-हद-में आ जाता है, अल्पज्ञ और अल्प शक्ति हो जाता है और कर्ता और भोक्ता बन जाता है। अपने कर्मों द्वारा पुण्य और पाप का सञ्चय करता है और ईश्वर की मर्मादा में उनके शुभ अशुभ फल भोगता है। जब तक यह रचना स्थिर रहती है यह भी बार बार जन्म ग्रहण करता है कर्म करता है और फल भोगता है। कल्प के अन्त में ईश्वर इस सारे प्रपञ्च का संहार कर लेते हैं अर्थात् यह सारा माया का कार्य अव्यक्त माया के रूप में वापिस आ जाता है। तब ये सारे जीव करने भोगने से रहित हो जाते हैं मानों उतने काल के लिये गहरी नींद सो जाते हैं। पर उनके कर्मों की

वासना अब भी नष्ट नहीं होती अतएव फिर नये शरीरों को धारण करते हैं। जबकि ईश्वर फिर नये सिरों से सृष्टि को रचते हैं और इसी तरह वह आगे नये कल्पों में शरीरों को धारण करते चले जायेंगे जैसे कि वह अनादि काल से पहले कल्पों में धारण करते चले आये हैं। इसी का नाम संसार है। यह संसार तब तक बना रहता है जब तक अज्ञान है। जब ज्ञान से अज्ञान का नाश हो जाता है तब यह संसार निवृत्त हो जाता है, पर यह उस एक के लिये निवृत्त हुआ भी दूसरों के लिये बना रहता है जो अभी अज्ञान की अवस्था में हैं। यह मार्ग जिससे ज्ञान का उदय होता है वेद में बतलाया है। वेद में दो मार्ग बतलाये हैं—एक कर्म का और दूसरा ज्ञान का। कर्म चाहे कैसा ही ऊँचे से ऊँचा क्यों न हो, वह मनुष्य को संसार से पार नहीं ले जा सकता। उसका बड़े से बड़ा फल भी संसार के अन्तर्गत ही होता है। दूसरा मार्ग ज्ञान काण्ड का है। इसके दो भेद हैं। एक वह भाग जिसमें ब्रह्म का ज्ञान वहाँ तक दिया है जहाँ तक उसका सम्बन्ध जगत् से है। इन भागों में ब्रह्म के भिन्न भिन्न गुण वर्णन किये हैं, अर्थात् इनमें सगुण ब्रह्म ईश्वर हिरण्य गर्भ का उपदेश है और उपासना के लिये है। इसी को उपासना काण्ड कहते हैं। दूसरा वह मार्ग है जिसमें ब्रह्म का शुद्ध स्वरूप सारे गुणों से रहित निर्गुण वर्णन किया है वा जिसमें जीवात्मा को ब्रह्म रूप बतलाया है। इनमें से पहले ज्ञान सगुण ब्रह्म की उपासना से जीवात्मा मुक्ति नहीं पाता है किन्तु वह शरीर को छोड़कर केवल ब्रह्म लोक में जाता है जहाँ वह एक अलग जीव के तौर पर बना रहता है यद्यपि उसकी शक्ति और ज्ञान बहुत बढ़ जाते

अन्ततः वह नि
ती जो ब्रह्म के
र महावाक्यों
मार्थ स्वरूप अ
म मुक्ति लाभ
र अपने अस्म
ह अद्वैत सिद्ध
र उसके ज्ञान
विन का मुख्य
बा है।

जो

—“जीवात्म
जीवात्मा
—एकात्मनि
आत्मा
है।

३—“शरीर
तीनों

४—“जगत्
जगत्

५—“कार
कार

के प

हैं। अन्ततः वह निर्गुण ज्ञान को लाभ करता है। और दूसरे वह ज्ञानी जो ब्रह्म के शुद्ध स्वरूप को जानते हैं, जो सारे गुणों से परे हैं और महावाक्यों तत्त्वमस्यादि द्वारा जान लेते हैं कि आत्मा के परमार्थ स्वरूप और परमात्मा में कोई भेद नहीं है, वे उसी क्षण परम मुक्ति लाभ करते हैं अर्थात् माया के प्रभाव से परे हो जाते हैं, और अपने असली स्वरूप को पा लेते हैं जो केवल शुद्ध ब्रह्म है। यह अद्वैत सिद्धान्त है जिसके विचार से जीव कृतकृत्य हो जाता है, और उसके ज्ञान में ब्रह्म के अतिरिक्त कुछ नहीं रहता है। यही मनुष्य जीवन का मुख्य उद्देश्य है इसी के लिये परमात्मा ने मनुष्य शरीर दिया है।

जीव के पाँच भ्रम और उनका निवारण

१—“जीवात्मा परमेश्वराद्भिन्नः”

जीवात्मा परमेश्वर से भिन्न है।

२—“एकात्मनि प्रतीयमानं कर्तृत्वादि वास्तव्यम्”

आत्मा में प्रतीत होता हुआ कर्तृत्वादि वास्तविक सिद्धान्त ही है।

३—“शरीरत्रयाविच्छिन्नात्मा सङ्गी”

तीनों शरीरों से अविच्छिन्न युक्त हुआ आत्मा संग वाला है।

४—“जगत्-कारणत्वेन ब्रह्मणो विकारित्वम्”

जगत् का कारण होने से ब्रह्म के भाव विकार हैं।

५—“कारणाद्भिन्नस्य प्रपञ्चस्य सत्यत्वम्”

कारण से भिन्न हुआ प्रपञ्च जगत् को भी सत्यपना है। ऐसे जीव के पाँच भ्रम हैं।

निम्नांकित पाँच दृष्टान्तों से उपर्युक्त पाँच भ्रम निवारण किये जाते हैं ।

“विम्ब-प्रतिविम्ब दृष्टान्तेन भेद-भ्रमो निवर्तनीयः”

विम्ब-प्रतिविम्ब के दृष्टान्त करके भेद-भ्रम निवर्त करना चाहिये । जैसे सूर्य के विम्ब से जल में गिरा हुआ प्रतिविम्ब भिन्न नहीं है ऐसे भेद का भ्रम दूर करना ।

“स्फटिक-लोहित-दृष्टान्तेन पारमार्थिक-कर्तृत्व भ्रमो निवर्तनीयः”

मणि में अर्थात् काँच में जैसे दूसरी वस्तु का लाल रङ्ग दीखता है इस दृष्टान्त करके आत्मा का कर्तापन भ्रम दूर करना ।

“सूक्ष्मग्न्युत्पादकाऽदर्श दृष्टान्तेन विकारित्व-भ्रमो निवर्तनीयः”

जैसे सूर्य से अग्नि को उत्पन्न करने वाला शीशा चकमक इन दोनों के योग से अग्नि उत्पन्न करता है तहाँ सूर्य कारण है सो विकार रहित है । विकारवान् शीशा ही है । ऐसे माया ही विकार वाली है । इस दृष्टान्त करके विकारित्व भ्रम दूर करना ।

“घटाकाश दृष्टान्तेन संगीति भ्रमो निवर्तनीयः”

जैसे घट के आकाश में महाकाश बँधा नहीं है । उस घटाकाश दृष्टान्त करके संगी संगपने का भ्रम दूर करना ।

“स्वर्ण कटक लोहखड्गादि दृष्टान्तेन कारणद्विभत्वेन प्रतीयमान-प्रपञ्चस्य सत्यत्व भ्रमो निवर्तनीयः”

स्वर्ण के कुण्डल और लोहे की तलवार जैसे स्वर्ण तथा लोहे से भिन्न सत्य नहीं हैं प्रत्युत सना तथा लोहा रूप ही हैं । इस दृष्टान्त करके कारण से भिन्नपना करके प्रतीत होते हुए जगत् के सत्यत्व का भ्रम निवर्त करना ॥इति॥

परम वि
प्रेम रूप
दीन द
सब दे
शक्ति इ
सबसे
हाथ उ
भक्ति भ
तेरी मे
संघ शक्ति
भीठी
जो जी
हममें
दिन दिन

॥ सत्संग सभा शिमला की प्रार्थना ॥

परम पिता पूरण प्रभो, परमानन्द अपार ।
प्रेम रूप पावन परम, ईश्वर सर्वाधार ॥
दीन दयालु दयानिधे, दाता परम उदार ।
सब देवन के देव हे, दुख दोषन से पार ॥
शक्ति ज्ञान आनन्द के, हे पूरण भण्डार ।
सबसे सुन्दर हे हरे, सब सारों के सार ॥
हाथ जोड़ हो वन्दना, तुमको बारम्बार ।
भक्ति भाव से नम्र हों, मन में श्रद्धा धार ॥
तेरी ऐसी हो दया, हममें बड़े भिलाप ।
संघ शक्ति का मान हो, मिटे फूट का पाप ॥
मीठी माला मेल की, फेरें हम दिन रात ।
जो जीवन से एक हों, तजें कलह की बात ॥
हममें में आवे एकता, भ्रातृपन का भाव ।
दिन दिन बल शक्ति बड़े, धरम करम में चाव ॥



आश्रम के उद्देश्य

- १—श्री भगवान् की भक्ति का प्रचार करना ।
- २—गो-रक्षा और उसके लिये गोचर भूमि छुड़वाना ।
- ३—जंगलों में वृक्ष लगवाना और उसके बीच में जलाशय बनवाना ।
- ४—शिक्षा का प्रचार करना, जिसमें मनुष्यमात्र विद्या लाभ कर सकें, और प्राचीन प्रथा को फिर प्रचलित करना ।
- ५—बीमारियों के अवसर पर दवाई बाँटना ।
- ६—ग्राम पास के ग्रामों में परस्पर के झगड़े और वैमनस्य मिटाकर शान्ति और प्रेम बढ़ाना ।
- ७—सब संस्थाओं में भगवद्भक्ति और धर्म का भाव जाग्रत करना ।
- ८—राजा और प्रजा सब ही का हित चिन्तन करना ।

सदाचार

ब्रह्मोभूत श्री १०८ स्वामी परमानन्द जी महाराज
द्वारा उपदिष्ट

प्रकाशकः—

श्री भगवद्भक्ति आश्रम,
जींद (कुरुक्षेत्र)

संवत्
२०२३

संख्या
१०००

मूल्य
सदुपयोग

वेद में सदाचार

१-भगवान् कहते हैं—हे जीवा ! मैं सत्यस्वरूप महा गम्भीर सत्य विद्या के प्रकट करने से जातवेदा हूँ । मैं किसी दास वा आर्य से पक्षपात नहीं करता । जो मेरी आज्ञा को मानेगा, पालेगा, उस पर चलेगा, मैं उसी का उद्धार करूँगा ।

२-ज्ञान विज्ञान के जानने के लिए दो प्रकार की वाणी हैं सत्य और झूठ । दोनों ही मनुष्य पर अपना प्रभाव डालती हैं । उनमें से जो सत्य है वह मनुष्य की जन्म-मरण से रक्षा करती है और जो असत्य है वह मनुष्य का नाश करती है । इसलिए दृढधर्मी को, किसी मजदूरकी कट्टरता का और पक्षपात आदि का छोड़कर सत्य वाणी को पकड़ो ।

३-एक साथ चलो । परस्पर संवाद करो, न कि विवाद । सबके मन की रफ्तार को देखो, उसके अनुसार मधुर हितकारी और प्रेम भरी वाणी से बर्ताव करो । तुम्हारे विचार द्वेष रहित हों, समान हों । तुम्हारी सभा में विरोध का अभाव हो । तुम्हारी जाति में एकता हो, सहानुभूति हो, ऊँच-नाचता का अभाव हो । सब मिलकर उत्तम ज्ञान को प्राप्त करो । एक दूसरे के साथ मैत्री करो । अपने मन को उत्तम ज्ञान से शुद्ध करो । इकट्ठे काम करने वालों का मन साफ हो । सब मिलकर खाओ पियो । प्रायः खाना पीना समान होना चाहिये ।

४-दीर्घ आयु वाले मिल बैठ खाने वाले हों । परमात्मा

जो प्रातःभाग में रक्षा

५-तुम्हारे अन्दर स
स्थापित करता हूँ ।
विक व्यवहार करो जैसे
धार करती है ।

६-पुत्र पिता का
न वाला हो । पत्नी
वाणी बोले ।

७-भाई से भाई द्व
त्तम और सन्नत होते
लो ।

८-तुम्हारा अन्न
में जोड़ता हूँ ।

९-तुम्हारे विचार
में एकता हो, तुम्ह
द्वारा चित्त समान ह
वेदना, हमदर्दी, पर
काम करो । जो तु
र करो, क्योंकि सब
वै कृप की वाणी क
स्थिति होगी ।

मारी प्रातभाग में रक्षा करें ।

५-तुम्हारे अन्दर सहृदयता, मन की शुद्धता और अद्वेष की स्थापित करता हूँ । तुम एक दूसरे से उसी प्रकार प्रीति-वर्क व्यवहार करो जैसे नये उत्पन्न हुए अपने बछड़े से गौ प्यार करती है ।

६-पुत्र पिता का अनुव्रत हो, माता के कारण पुत्र शुद्ध-मन वाला हो । पत्नी अपने पति से सधुर और शान्तिकारी वाणी बोले ।

७-भाई से भाई द्वेष न करे, बहन से बहन द्वेष न करे । उत्तम और सत्रत होते हुए तुम परस्पर कल्याणकारी वाणी से बोलो ।

८-तुम्हारा अन्न का भाग समान हो । मैं तुमको एक ही धुरे में जोड़ता हूँ ।

९-तुम्हारे विचार समान अर्थात् द्वेष-रहित हों । तुम्हारी समा में एकता हो, तुम्हारा व्रत अर्थात् काय समान हो तथा तुम्हारा चित्त समान हो । जिस करके आपस में सहानुभूति, समवेदना, हृमददी, परस्पर प्रेमभाव, परमेश्वर की भक्ति बढ़े वही काम करो । जो तुम अपने लिए चाहते हो वही दूसरों के लिए करो, क्योंकि सब तुम्हारे ही आत्मभूत हैं । दूसरों से अर्थात् कृप की वाणी की तरह का है । जैसा कहोगे वैसा प्रतिध्वनि होगी ।

॥ प्रार्थना ॥

ॐ भूभुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य
धोमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ॐ ॥

ओं—सर्व व्यापक, रक्षा करने वाले;

भूः—सत्ता सृष्टि देने वाले, सत्य स्वरूप;

भुवः—दुःखों के नाश करने वाले, ज्ञान स्वरूप;

स्वः—सुख स्वरूप;

तत्—अनन्त, अपार, सबके सारभूत परमात्मा;

सवितुः—सब जगत् को उत्पन्न करने वाले, पालन करने
वाले, संहार करने वाले, प्रेरक, प्रेरणा करने
वाले;

वरेण्यम्—सर्व श्रेष्ठ;

भर्गो—तेजःपुञ्ज ज्योतिस्वरूप;

देवस्य—दिव्य ज्ञान और आनन्द के देने वाले, विजय
कराने वाले, प्रकाश स्वरूप सर्वशक्तिमान् दयालु
कृपालु परमात्मा;

धोमहि—हम आपका ध्यान करते हैं;

धियः—बुद्धियों को;

यः—जो;

नः—हमारी;

प्रचोदयात्—प्रेरणा करें। आप हमारी बुद्धियों को प्रेरणा करें कि हम आपको प्राप्त हों। हमको पवित्र बुद्धि और अपना भक्ति प्रदान कीजिए।

ओं यत्तेजः सवितुर्देवस्य वरेण्यं तदुपास्महे।

तत्तेजोऽस्माकं बुद्धीः [श्रेयस्करेषु नियोजयेत्॥

हे तेजःपुञ्ज व्योतिःस्वरूप परमात्मन् ! ज्ञान और आनन्द के देने वाले ! विजय कराने वाले ! प्रार्थना और स्तुति करने योग्य, सबको उत्पन्न करने वाले ! सबका संहार करने वाले ! सबकी रक्षा करने वाले ! सबको प्रेरणा करने वाले ! अनन्त अपार आनन्दस्वरूप ज्ञानस्वरूप परमात्मन् ! हम तुम्हारा ध्यान करते हैं। तुम्हारे गुण हममें प्रकट हों और हम तुमको प्राप्त हों। जो तुम हो सो ही हम हैं और जो हम हैं सो ही तुम हो, ऐसे ऐक्य-भाव से हम तुम्हारा ध्यान करते हैं। तुम हमारी बुद्धियों को पवित्र और धर्मार्थ, काम और मोक्ष में प्रेरणा करो। हममें तेरी सच्ची भक्ति और प्रेम प्रकट होवे। सबको हम अपना ही आत्मा समझें और हमारे शत्रु नाश को प्राप्त हों। भीतर काम, क्रोध इत्यादि और बाहर हमारी उन्नति में बाधक विघ्नकारक शत्रु सब नष्ट हों, जिससे आनन्दपूर्वक हम आपको प्राप्त हों। धन्यवादपूर्वक हमारी

आपको अनन्तवार नमस्कार हो । हमारी रक्षा करो । एक मात्र आप ही हमारे रक्षक हो ।

॥ ओं शम् ॥

इस मन्त्र को जो श्रद्धा भक्ति पूर्वक जपेगा उसे अवश्यमेव भगवान् के दर्शन होंगे, मोक्ष मिलेगी, कल्याण होगा, सब पापों का नाश होगा, मनोकामना पूर्ण होगी । पुत्र के इच्छुक को पुत्र, धन चाहने वाले को धन, रोगी को नीरोगता, विजय चाहने वाले को विजय प्राप्त होगी, सिद्धि चाहने वाले को सिद्धि, ऋद्धि चाहने वाले को ऋद्धि, विद्या चाहने वाले को विद्या, भक्ति चाहने वाले को भक्ति, प्रेम चाहने वाले को प्रेम, और प्रेम का आश्रय परमात्मा प्राप्त हो जावेगा, इसमें सन्देह नहीं !

आश्रम के उद्देश्य

- १—श्री भगवान् की भक्ति का प्रचार करना ।
- २—गो-रक्षा और उसके लिये गोचर भूमि छुड़वाना ।
- ३—जंगलों में वृक्ष लगवाना और उसके बीच में जलाशय बनवाना ।
- ४—शिक्षा का प्रचार करना, जिसमें मनुष्यमात्र विद्या लाभ कर सके, और प्राचीन प्रथा को फिर प्रचलित करना ।
- ५—बीमारियों के अवसर पर दवाई बाँटना ।
- ६—आस पास के ग्रामों में परस्पर के झगड़े और वैमनस्य मिटाकर शान्ति और प्रेम बढ़ाना ।
- ७—सब संस्थाओं में भगवद्भक्ति और धर्म का भाव जाग्रत करना ।
- ८—राजा और प्रजा सब ही का हित चिन्तन करना ।

सार-संग्रह

प्रकाशक

श्रीभगवद्भक्ति आश्रम (कुरुक्षेत्र)

जौंद (हरियाना)

संवत्

२०२७

मूल्य

सदुपयोग

महात्माओं के वाक्य ।

हे मेरे ईश्वर ! मेरे जीवन के लबालब भरे पात्र से तू कौनसा दिव्य रस पान कराना चाहता है ।

त्याग मेरे लिये मुक्ति नहीं है मुझे तो आनन्द के सहस्रों बंधनों में मुक्ति का रस आता है ।

आदमी जितना आप बिगाड़ करता है उतना दूसरे नहीं कर सकते । जो कुछ हम आप सीखते हैं उसका असर दूसरों की सीख से बढ़ कर है ।

उपदेग और अच्छी सलाह जहां से मिले आदर के साथ स्वीकार करो । देखो मोती सा अनमोल पदार्थ सीप जैसी तुच्छ वस्तु से निकलता है । जो अच्छी सलाह नहीं सुनता वह धिक्कार सुनेगा ।

अर्थ सिद्धि की दो कुञ्जियां हैं बुद्धि और आशा संयुक्त उद्योग । बिना इनके आदमी संसार में बढ़ नहीं सकता ।

किसी बात के निरांय में जल्दी न करो पर जब समझ लिया तो दृढ़ तो संकल्प रहो । करने के पूर्व उस काम की हानि लाभ भली भाँति मन में तोल लो फिर उसको करो परिणाम चाहे जो हो ।

किसी काम में हाथ डालने के पहले अपने पुरुषार्थ को तोल लो बहुत ऊँचे चढ़ जाने से गिर जाने का डर और बहुत नीचे पड़े रहने से कुचल जाने का भय होता है ।

मालिक पर भरोसा करो पर ऊँट के पाँव बान्ध कर रखो ।

जिसने किसी काम को पूरा करने का प्रण ठान लिया वह उसको अवश्य कर लेगा ।

कर्ता सब पशु पक्षियों को आहार देता है परन्तु उनकी माँद में नहीं डाल आता ।

धन की मिठास उसको मिलेगी जिसने उसकी कमाई में महनत की कड़वाई को चखा है ।

किसी कठिन काम के करने में हिम्मत हार देना कायरता का लक्षण है। यदि उसे दूसरे कर सकते हैं तो तुम क्यों नहीं कमर कस कर तैयार हो जाते ? कुछ मालिक पर भरोसा अवश्य रखो जो सब उद्योग की जान है उस पर दृढ़ विश्वास रख कर आदमी असम्भव काम कर सकता है असम्भव शब्द केवल मूर्खों के कोष में मिलता है।

स्वतन्त्र और अनाधीन वही कहा जा सकता है जो अपने काम के लिये दूसरे का आश्रित नहीं है।

एक से एक मिलकर ग्यारह होते हैं परन्तु अलग रहने से एक का एक ही बना रहता है। पर याद रखो 'एका' नाम अच्छे और नीति संयुक्त कामों के लिये मिलने का है। नीति विरुद्ध कामों के मिलने का नाम "गुट्ट है।"

तैमूर लंग का कथन है कि यदि तुम प्रजा को आराम देना चाहते हो तो न्याय के खज्ज को आराम न लेने दो। न्याय में कोमलता मिली रहने से वह सोना और सुगन्ध हो जाता है।

उमर भक्त ने किसी गुलाम से जो बकरी चराता था पूछा कि एक बकरी मेरे हाथ बेचेगा। उसने जवाब दिया कि बकरियों का मालिक दूसरा है मुझे तो इनके चराने का काम सुपुर्द है। इस पर उमर बोले कि इनका मालिक यहां तो नहीं देखता है उससे कह देना कि एक बकरी को भेड़िया उठा ले गया। तब चरवाहे ने उत्तर दिया कि जो बकरी का मालिक नहीं देखता तो घट घट व्यापी मालिक तो देखता है। यह सुन कर उमर रो पड़ा।

भलों का संग करो। कुसंग से बचो बड़ों की आज्ञा पालना मनुष्य का धर्म है। बड़ों से लड़ना अपना अपघात करना है। बड़ों की सीख संसार की कोच में न फँसने के लिये लाठी का काम देती है समझदार को चाहिये कि सदा बड़े का संग करे।

जो कोई अपनी उन्नति या कीर्ति चाहता है तो उसको इन अवगुणों से बचना चाहिये । अधिक सोना, अंधता, डर, क्रोध, आलस्य और टालमटोल ।

राज भक्ति का भारी दर्जा धर्म शास्त्र और नीति दोनों में है । राजा या बादशाह के द्रोही का लोक परलोक दोनों बिगड़ता है ।

धमण्ड या अहंकार मूर्खता का चिह्न है ।

जो दूसरे की निन्दा नहीं करता जिसको अपनी प्रशंसा नहीं सुहाती दूसरे की प्रशंसा से हर्ष होता है, जो दूसरों को सुख पहुँचाता है, छोटों से कोमलता तथा दया भाव से और आदर सत्कार के साथ वर्तता है तथा खेल में भी किसी के साथ चालाकी नहीं करता वह महापुरुष है ।

यूनान का फीसागोरस पुनर्जन्म में दृढ़ विश्वास रखता था उसने कहा कि मैं पहले जन्म में फीज का अफसर था और लड़ाई में मारा गया । उसके पता देने से एक कन्दिरा में जहाँ लड़ाई हुई थी उसके हथियार पड़े मिले । इसी तरह अपने बहुत से चेलों के पिछले जन्मों का हाल बताया और लोगों को प्रत्यक्ष प्रमाण से निश्चय करा दिया ।

मीलाना रुम ने फरमाया है कि मैं कितने ही जन्म भोग चुका हूँ ।

बुद्ध का उपदेश:—नोकरी बुद्धिमान की करो । मूर्ख से बचो । राज्यों के परोस में रहो । भली कामनाओं को मन में बसाओ और बुरी कामनाओं को निकालो । शान्त स्वभाव रहो । जब कोई दोष लगावे तो अपने मन को न बिगाड़ो । विपत्ति में फूल न जाओ और विपत्ति में पिचक न जाओ । दूसरे का माल ईमानी से लेने या दवा बैठने की नियत न करो । जिनसे तुम्हारा जी नहीं मिलता उनसे दूर रहो । किसी को कथनी या करनी से धोखा न दो ।

पक्के घर्मी की बोली मीठी होती है क्योंकि जो अच्छे काम की कठिनता को जानता है वह अवश्य सम्भल कर बोलेंगा ।

आदमी अपना दर्पण आप है । अपनी आंख आप खोलो नहीं तो कण्ट खोलेगा ।

झूठी खबर न उड़ाओ । बुरे से मेल न करो । तुम्हारे शत्रु का विचारा हुवा वेल तुम्हें मिले तो उसके घर पहुँचा दो । परदेशी को न सताओ । जब खेत काटो तो थोड़ा सा बटोही के लिये भी छोड़े दो । अपने परोसी के साथ अत्याचार न करो । मजूर की मजूरी रात भर रोक न रखो । बहरे की ठठोली न उड़ाओ । अन्धे की राह में ठोकर खाने को ढेला न रखो । मुखबिरी न करो । चुगली न खाओ । अपने परोसी को बुरे काम करने से डाटो । किसी को छोटी निगाह से न देखो लग्न मुहूर्त का विचार मत करो ।

बूढ़ों का खड़े होकर सत्कार और सब प्रकार प्रतिष्ठा करो । घरती का प्रेम आकर्षण या खेच शक्ति का नाम है जिससे वह सब रचना ठहरी हुई है और मालिक आप प्रेम स्वरूप हैं अपने से बढ़ कर किसी को चाहना प्रेम है जो अपने से बढ़ कर मालिक को चाहता है उसको तन मन धन अपने प्रीतम पर बार देने में क्या सोच विचार होगा ।

प्यारे ! अगर तू न बोलेंगा तो मैं अपने हृदय को मौन से भर लूँगा, मैं चुप चाप पड़ा रहूँगा और तारों से भरी हुई रात्रि की तरह प्रतीक्षा करूँगा तेरी वाणी की सुनहरी धाराएँ आकाश को चीर कर नीचे की ओर बहेंगी ।

लोग अपने विधि विधानों से मुझे जकड़ने के लिये आते हैं किन्तु मैं उन्हें टाल देता हूँ क्योंकि मैं तो केवल प्रेम के कर कमलों में आत्म समर्पण करना चाहता हूँ । मुझे आज नींद नहीं, रह २ कर मैं द्वार खोलता हूँ और अंधेरे में बाहर की ओर देखता हूँ मैं विस्मित हूँ कि तेरा रास्ता किधर है । दुःख

रूपी दूत तेरे द्वार को खटखटा रहा है। उसका संदेश है कि तेरा स्वामी जगता है और रात्रि के अन्धकार में वह मुझे प्रेमाभिसार के लिये बुला रहा है। वह ऐसे समय आया जब रात्रि का सघनाटा था। वह मेरे इतने नजदीक आता है कि जिसकी श्वास मेरे शरीर में लगती है।

मेरा छोटा हृदय उनके हाथों के अमृतमय स्पर्श से अपने आनन्द की सीमा को खो देता है और उसमें ऐसे उद्गार उठते हैं कि जिनका वर्णन नहीं हो सकता।

संसारी जनों का प्रेम मुझे सब तरह से बांधने का यत्न करता है और मेरी स्वतन्त्रता को छीन लेता है परन्तु तेरा प्रेम जो उनके प्रेम से बढ़कर है निराला है वह मुझे दासता की शृंखला में नहीं बाँधता किन्तु मुझे स्वतन्त्र रखता है।

तीन बात जितनी बढ़ाओगे बढ़ेंगी। भूख नींद और डर।

तीन की महिमा तीन जानते हैं। जवानी की बूढ़े, आरोग्यता की रोगी और धन की निर्धन।

तीन बातों से बचो सब तुम्हें पसन्द करेंगे। किसी से कुछ न मांगो, किसी को बुरा मत कहो और किसी के मेहमान के बिना बुलाए पुछलगू न हो।

तीन के बिना तीन नहीं रहते। धन बिना वाणिज्य के, विद्या बिना शास्त्रार्थ के और राज्य बिना शासन के।

बूढ़ों का आदर करना छोटों को सलाह देना, बुद्धिमानों से सलाह लेना, भूखों के साथ न उलझना।

चार तरह के आदमी होते हैं, मक्खी चूस, कंजूस, उदार और दाता। जो

न आप खाय न दूसरे को दे वह मक्खीचूस, आप खाय पर दूसरे को न दे वह कंजूस, आप भी खाय और दूसरों को भी दे वह उदार और जो आप न खाय परन्तु दूसरों को दे वह दाता कहलाता है। यदि दाता नहीं बन सकते तो उदार तो अवश्य ही होना चाहिये।

संकट में मित्र की, रण में शूर की ऋण में साहू की टोटे में स्त्री की और रोग शोक में नातेदारों की पहचान होती है।

खुशी रंज, रोजी मौत यह चार अपने आप आती हैं।

चार जाकर फिर नहीं आती, छूटा हुवा तीर, मुंह के निकली बात, बीती हुई उमर और टूटा हुवा दिल।

जो आके न जाय वह बुढ़ापा देखा।

जो जाके न आय वह जवानी देखी ॥

चार चीजें पहले निर्बल दीखती हैं और आगे जोर दिखलाती हैं। शत्रु, आग, रोग और ऋण।

पाँच के संग से बचना चाहिये भूठा, मूर्ख, कञ्जूस, डरपोक और दुष्ट।

मैं आकारों के समुद्र में इस आशा से गहरी डुबकी मारता हूँ कि निराकार का पूर्ण मोती मेरे हाथ आजाय।

मैं अपने जीवन भर अपने गीतों के द्वारा तुझे ढूँढ़ता रहा हूँ। अब मैं उत्सुक हूँ कि मर कर अमरत्व में लीन हो जाऊँ।

मैं तेरी कथाओं को अमर गीतों में प्रकट करता हूँ और तेरा रहस्य मेरे हृदय से निकल पड़ता है।

मैं तुझे तेरी जीत की भेटों और अपनी हार के हारों से अलंकृत करूँगा।

जीवन रुही नौका की पतवार को जोड़ते समय मैं जानता हूँ कि अब तु इसे अपने हाथ में ले लेगा ।

नीलाकाश से एक आँख मेरी ओर देखेगी और इशारे से चुपचाप मुझे अपनी ओर बुलाएगी ।

जब मैं यहाँ से बिदा होऊँ तब मेरे अन्तिम वचन यह हों, कि मैंने जो कुछ देखा है उससे बढ़कर और कुछ नहीं हो सकता ।

जब माँ बच्चे को दाहने स्तन से छुड़ाती है तो वह खींचता है और दूसरे क्षण में ही जब वह उसे बाँया स्तन देती है तब उसे आश्वासन होता है ।

मुझे उस समय की कोई खबर नहीं जब मैंने पहिले पहल इस जीवन में प्रवेश किया था ।

जब प्रातःकाल मैंने आकाश को देखा तो मुझे उसी क्षण मालूम हुआ कि मैं इस जगत् में कोई अपरिचित जन नहीं हूँ और उस नाम रूप रहित अज्ञेय शक्ति ने मेरी माँ का रूप धारण कर मुझे अपनी गोद ले लिया है । हे मेरे मित्रो ! अब मेरे जाने की बेला है । तुम सब मेरे लिये शुभ कामना करो । आकाश वहाँ से रक्त वर्ण हो रहा है और मेरा मार्ग सुहावना है । मैं अपनी यात्रा पर खाली हाथ और आशा पूर्ण हृदय के साथ जाता हूँ ।

मुझे छुट्टी मिल गई है । ऐ मेरे भाइयो ! मुझे बिदा करो मैं तुम सबको प्रणाम करता हूँ मेरा बुलावा आया है और मैं यात्रा के लिए तैयार हूँ ।

मैं जो कुछ हूँ, मेरे पास जो कुछ है मैं जो कुछ आशा करता हूँ, और मेरा प्रेम यह सब गम्भीर रीति से सदा तेरी ओर प्रवाहित होते रहे हैं । मेरे ऊपर तेरे नयनों का अन्तिम कटाक्ष पड़ते ही मेरा जीवन सदा के लिए तेरा हो जायगा ।

पुष्प पिरो लिए गए हैं, बरके लिए माला तयार है मृत्यु के पश्चात्, वधू भक्त अपने घर से विदा होगी और अपने स्वामी से शून्य रात्रि में अकेली मिलेगी ।

जब मृत्यु मेरे द्वार को खटखटायेगी तब अपने प्यारे अतिथि के आगे जीवन का भरपूर पात्र रख दूंगा । उसे खाली हाथ न जाने दूंगा ।

प्रवीण शिल्पी अनेकों प्रतिमायें बनाते हैं । जब उनका समय आजाता है तब वे विस्मृति की पवित्र धारा में विसर्जन करदी जाती हैं ।

वसन्त की मन्द २ वायु रह रह कर तेरे निर्जन भवन में उन फूलों के समाचार लाती है जो पूजा में तुम्हें नहीं चढ़ाये जाते ।

मैं तेरे सन्ध्यागमन के सुनहरे शामयाने के नीचे खड़ा हूँ । और अपने उत्सुक नयनों को तेरे मुखारविन्द की ओर उठाता हूँ ।

हाथ जोड़ कर अश्रु जल से मैं उसकी पूजा करूँगा । और अपने हृदय के रत्न को उसके चरणों में अर्पण करूँगा ।

हे प्रभु ! तेरे हाथ में अनन्त समय है हमारे पास वृथा नाश करने के लिए तनिक भी समय नहीं इस लिये हमें अपने अवसरों और सफलताओं के लिये छोटा झपटी करनी चाहिए ।

हम इतने दरिद्री हैं कि विलम्ब नहीं कर सकते झगड़ा करने वालों के साथ झगड़ा करने में मेरा समय निकल जाता है । तेरी वेदी अन्त तक शून्य पड़ी रह जाती है । दिन समाप्त होने पर डरता हूँ कि कहीं तेरा द्वार बन्द न हो जाय । पर ज्ञात होता है कि अभी समय बाकी है ।

मेरे जीवन के प्रत्येक क्षण का नियन्ता तू है । सब के भीतर रह कर तू बीजों में अंकुर, कलियों में फूल और फूलों में फल उत्पन्न करता है ।

मनुष्य को चाहिये क्रोध को प्रेम से जीते, बुराई को भलाई से, लालची

को उदारता से और झूठे को सत्य से ।

यदि कोई आदमी मोटा और पेटू हो जाता है और सोने वाला व चार-पाई पर लेटने वाला बन जाता तो वह मूर्ख उस शूकर की भाँति होता है जो मैले पर गुजारा करता है और बार बार जन्म लेता है ।

बुढ़ापे तक स्थिर रहने वाली भलाई सुखदाई है हठता से पकड़ा हुआ विश्वास सुखप्रद है, ज्ञान का प्राप्त करना आनन्ददायक है और पापों से बचना सुखदाई है ।

जो अन हुई बात को कहता है और जो हुई से इन्कार करता है वह दोनों नरकगामी हैं ।

तृष्णा से प्रेरित हुए मनुष्य वेड़ियों और बन्धनों से जकड़े हुए पाश में फँसे हुए शशे की भाँति चिर काल तक बार २ दुःख उठाते रहते हैं ।

जिसका मन संयम में है उस ही में शक्ति, शान्ति प्रेम और बुद्धि है ।

उस ही ने सम्पूर्ण जगत् को जीता है जिसमें पूर्ण शान्ति है ।

पण्डित चिन्ता, भय, शोक, मोह, निराशा और घृणा इन सब से दूर रहता है ।

बौद्ध-भिक्षुक

१. आँख का निग्रह करना उत्तम है नासिक का निग्रह उत्तम है, कावों का निग्रह अच्छा है, और जिह्वा का निग्रह उत्तम है ।

२. शरीर का संयम अच्छा है, वाणी संयम उत्तम है, विचारों का संयम उत्तम है इसी तरह प्रत्येक बात में संयम उत्तम है । जो भिक्षुक सब बातों में संयम कर लेता है वह सब दुखों से छूट जाता है ।

शा

३. जो अपने हाथ को बस में रखता है, जो अपने पावों को बस में रखता है, जिसकी वाणी बस में है, जो अच्छी तरह बसवर्ती है, जो अन्तरात्मा में आनन्द मानता है, जो संयमी है, जो एकान्तवासी और सन्तोषी है उसे भिक्षुक कहते हैं।

४. भिक्षुक जो अपने मुख को बस में रखता है। जो बुद्धिमानी और शान्ति से भाषण करता है। जो अर्थ और आदेश की शिक्षा देता है। उसकी वाणी प्रिय है।

५. जो आदेश में निवास करता है, जो आदेश में आनन्द मनाता है, जो आदेश के अनुसार ध्यान करता है जो आदेश का अनुगामी है वह भिक्षुक सत्य आदेश से कभी नहीं गिरेगा।

६. जो कुछ मिल जावे उसे तुच्छ न समझे, कभी दूसरों से ईर्ष्या न करे जो भिक्षुक औरों से ईर्ष्या करता है उसे शान्ति नहीं मिलती।

७. उस भिक्षुक की (जो प्राप्त पदार्थ को तुच्छ नहीं समझता चाहे उसे बहुत कम मिला हो) देवता भी श्लाघा करते हैं, यदि उसका जीवन पवित्र है और वह आलसी नहीं है।

८. जो अपने को नाम व रूप से भिन्न समझता है वह मिथ्या पदार्थों के लिये शोक नहीं करता और वह निस्सन्देह भिक्षुक है।

९. वह भिक्षुक जो करुणा से काम करता है और बुद्ध के सिद्धान्त मानने में अचल है प्राकृतिक कामनाओं, और हर्ष से मुक्त हुवा शान्ति के स्थान (निर्वाण) को प्राप्त हो जावेगा।

१०. अय भिक्षुक ! इस नौका को खाली करदे, खाली होने पर यह जीघ्र चलेगी, और राग व द्वेष को त्याग कर तू निर्वाण को प्राप्त हो जायेगा।

पाँच को छिन्न भिन्न करदे, पाँच को छोड़ दे, पाँच से ऊपर होजा । ऐ भिक्षुक ! जो इन पाँच वेड़ियों से वच निकला है वह ही पार गया है ।

ऐ भिक्षुक ! ध्यान कर और लापरवाह मत बन । अपने विचार को ऐसे पदार्थ पर मत लगा जो तुझे सुख देता है, क्योंकि ऐसा न हो कि अपनी लापरवाही के कारण नर्क में तुझे अग्नि का गोला निगलना पड़े और उस अवसर पर जलते हुये तू चिल्ला कर कहे कि यह दुःख है ।

बिना ज्ञान के ध्यान नहीं और बिना ध्यान के ज्ञान नहीं, वह जिसको ज्ञान व ध्यान दोनों हैं निर्वाण के निकट है ।

वह भिक्षुक जिसका शरीर, वाणी और मन शान्त है, और चित्त एकाग्र है, और जिसने संसार के प्रलोभनों को छोड़ दिया है वह शान्त कहलाता है ।

जो इच्छाओं के दास हैं वह कामनाओं के प्रवाह के साथ इस तरह नीचे जाते हैं जिस तरह मकड़ी अपने बनाए हुए जाले के साथ । बुद्धिमान् पुरुष अन्त में इसे काट कर संसार से विरक्त हो जाते हैं और मोह को छोड़कर चिन्ता रहित हो जाते हैं ।

जो सामने है उसे भी छोड़ दो जो पीछे है उसे छोड़ दो और जो मध्य में है उसे भी छोड़ दो ।

बुद्धिमान् पुरुष उस वेड़ी को दृढ़ नहीं कहते जो लोहे, लकड़ी और सन की बनी हुई हो । उनसे कठिन पाश स्त्री और बाल बच्चों के लिए आभूषण और रत्नों की चिन्ता है ।

मैंने सब जीत लिया है मैं सब कुछ जानता हूँ मैं जीवन की प्रत्येक दशा

में दुःख से मुक्त हूँ मैं सर्व त्यागी हूँ और तृष्णा का नाश करके स्वतंत्र हो गया हूँ । स्वयं पढ़ कर मैं किसे पढ़ाऊँ । हमारा अस्तित्व हमारे विचारों पर अवलम्बित है, और हमारे विचारों से ही इसकी सृष्टि है । यदि मनुष्य दुष्ट विचार से भाषण करता है, या कर्म करता है तो दुःख उसका पीछा करता है जैसे कि चक्र गाड़ी में जुड़े हुए बैल के पाँव का अनुगामी होता है । यदि मनुष्य शुद्ध विचार से भाषण करता है तो सुख उसका इस तरह अनुवर्ती होता है कि जिस तरह उसका छाया सदैव उसका साथ देता है ।

जिस तरह वर्षा टूटे हुए छप्पर में घुस जाती है, उसी तरह मलीन हृदय में विषय प्रवेश कर जाते हैं ।

जो हमारे जीवन जगत् का दाता है, वही हमारा पिता रक्षक भी है, वह महान् तेजस्वी एवं महान् शासक है ।

अय परम प्यारे ! तुम जो अपने भक्तों उपासकों को परम सुख एवं परम शान्ति का दान किया करते हो, यह तुम्हारी अपनी ही सत्यता सत्य स्वरूपता है और तुम्हारी अपनी ही कृपा का परिणाम है ।

वही लोग मुक्त हैं जिन्होंने अपनी इच्छाओं को जीत लिया है बाकी लोग देखने में स्वतन्त्र मालूम होते हैं मगर वास्तव में वह बन्धन में जकड़े हुए हैं ।

फिजूल खर्च करने वाले के पास जैसे धन नहीं ठहरता ठीक इसी तरह मांस खाने वाले के हृदय में दया नहीं रहती ।

जिसे उचित अनुचित का विचार है, वही वास्तव में जीवित है पर जो योग्य-अयोग्य का खयाल नहीं रखता उसकी गिनती मुर्दों में की जायगी ।

यदि किसी को अपने से प्रेम है तो उसको पाप की ओर जरा भी न झुकना चाहिए ।

मालव द्वारा ए
उसका फल त
नृत्त और निन्दा
तम है, क्योंकि इस
जो लोग अपने
कर्मों के दोषों को
संसार त्यागी प
गो की कटुवाणी
वेद भी अगर
सदाचार से य
अपने स्थान से भ्रष्ट
यदि कोई श्राव
मुनी नहीं हो जा
नी तुलना करके भ
काम के समस्त
जब तुम बन
जाओगे और
संसार को छो
ठिन है, आश्रम
रहना भी दु
ष्ठ है ।
यदि मनुष्य

लालच द्वारा एकत्रित किए धन की कामना मत करो क्योंकि भोगने के समय उसका फल तीखा होगा ।

भूठ और निन्दा के द्वारा जीवन व्यतीत करने से तो फौरन ही मर जाना उत्तम है, क्योंकि इस तरह मर जाने से नेकी का फल मिलता है ।

जो लोग अपने मित्रों के दोषों की खुल्ले आम चर्चा करते हैं, वह अपने दुश्मनों के दोषों को भला किस तरह छोड़ेंगे ।

संसार त्यागी पुरुषों से भी बड़ कर सन्त वह है जो अपनी निन्दा करने वालों की कटुबाणी को सहन कर लेता है ।

वेद भी अगर विस्मृत हो जाय तो फिर याद कर लिए जा सकते हैं, मगर सदाचार से यदि एक बार भी मनुष्य गिर जाय तो, सदा के लिये अपने स्थान से भ्रष्ट हो जाता है ।

यदि कोई आदमी मूर्ख और अज्ञानी है तो केवल मौन व्रत धारण करने से मुनी नहीं हो जाता, बल्कि वह बुद्धिमान् आदमी जो भलाई और बुराई की तुलना करके भलाई को ग्रहण करता है मुनी है ।

काम के समस्त वन को काट डालो, काम के वन से भय उपस्थित रहता है । जब तुम वन को और उसके छोटे पौदों को काट डालोगे तो तुम वन से दूर जाओगे और मुक्त हो जाओगे ।

संसार को छोड़कर तपस्वी हो जाना कठिन है, संसार को भोगना भी कठिन है, आश्रम का जीवन भी कठिन है, घर दुःखदाई है । बराबर वालों के साथ रहना भी दुःखप्रद है, दुःख सहित भ्रमण शील भिक्षुक ही सब से श्रेष्ठ है ।

यदि मनुष्य परदोष दृष्टि रखता है और स्वयं सदा अपराध करने की

वृत्ति रखता है तो उसके विकार बढ़ेंगे और वह मनः विकारों के दमन करने से बहुत दूर है।

महान् पुरुष जो उपकार करते हैं, उसका बदला नहीं चाहते। भला संसार जल बरसाने वाले बादलों का बदला किस तरह चुका सकता है ?

योग्य पुरुष अपने हाथों से मेहनत करके जो धन जमा करते हैं, वह सब दूसरों ही के लिए होता है।

हार्दिक उपकार से बढ़कर न तो कोई चीज़ इस संसार में ही मिल सकती है और न स्वर्ग में।

नबालव भरे हुए गाँव के तालाब को देखो जो मनुष्य सृष्टि से प्रेम करता है उसकी सम्पत्ति उसी तालाब के समान है।

दिलदार आदमी का वैभव गाँव के बीचों बीच उगे हुए और फलों से लदे हुए वृक्ष के समान है।

गरीब को देना ही दान है, और सब तरह का देना उधार देने के समान है।

दान लेना बुरा है चाहे उससे स्वर्ग क्यों न मिलता हो। और दान देने वाले के लिए चाहे स्वर्ग का द्वार ही क्यों न बन्द हो जाय, फिर भी दान देना धर्म है।

हमारे पास नहीं है ऐसा कहे बिना दान देने वाला पुरुष ही केवल कुलीन होता है।

याचक के होठों पर सन्तोष जनित हंसी की रेखा देखे बिना दानी का दिल खुश नहीं होता।

आत्मजयी की विजयों में से सर्व श्रेष्ठ जय है भूख को जय करना।

मगर उस विजय से भी बढ़ कर उस मनुष्य की जय है जो भूख को शास्त
करता है ।

निःसन्देह प्रभात का आगमन होगा और अन्धकार का नाश होगा और
तेरी वाणी की सुनहरी धाराएँ आकाश को चीर कर नीचे की ओर बहेंगी ।

तब मेरे पक्षियों से प्रत्येक घोंसले से तेरे शब्द गीतों के रूप में उड़ेंगे
और मेरी समस्त वन वाटिकाओं में तेरे सुर फूलों के रूप में खिल उठेंगे ।

वही तो मेरा अन्तरात्मा है जो मेरे जीवात्मा को अपने गम्भीर अदृश्य
स्पर्शों से जागृत करता है ।

यह वही है जो इन नेत्रों पर अपना जादू करता है और मेरे हृदय रूपी
वीणा के तन्तुओं पर सुख दुःख के विविध सुरों को आनन्द से बजाता है ।

यह वही है जो इस माया के जाल को सुनहले और रूपहले हरे और
नीले क्षणिक रंगों में बुनता है और उन जालों में से अपने चरणों को बाहर
निकालने देता है जिनके स्पर्श मात्र से मैं अपने आपको भूल जाता हूँ ।

दिन आते हैं और युग के युग बीतते जाते हैं यह केवल वही है जो मेरे
हृदय को नाना नामों, नाना रूपों और हर्ष शोक के नाना उद्वेगों में घुमाता
है ।

तू मेरे लिये सदा नाना रंगों और गन्ध के अमृत की वर्षा किया करता
है और मेरे इस मिट्टी के पात्र को लवालब भर देता है । मेरा संसार अपने

सकड़ों दीपों को तेरी ज्योति से प्रज्वलित करेगा और तेरे मन्दिर की वेदी

पर उन्हें चढ़ायेगा ।

नहीं मैं अपनी इन्द्रियों के द्वार कभी बन्द न करूँगा । शब्द स्पर्श रूप रस गन्ध का सुख तेरे परमानन्द को उत्पन्न करेगा ।

हाँ, मेरे सब अम और संशय तेरे आनन्द की ज्योति में भस्म हो जायेंगे, और मेरी सब वासनायें प्रेम रूप फलों में परिणत हो जायगी ।

हे प्रभो ! हम जीवों को जो कुछ दिया है वह हमारी सब आवश्यकताओं को पूरा करता है, और फिर तेरे पास ज्यों का त्यों लौट जाता है ।

नदी अपना नित्य का काम करती है और खेतों बस्तियों में होकर वेग से बहती चली जाती है । तथापि उसकी निरन्तर धारा तेरे चरणों की ओर प्रक्षालन के लिये जाती है ।

फूल अपने सौरभ से वायु को सुगन्धित करते हैं तथापि उनकी अन्तिम सेवा यही है कि अपने को तेरे चरणों में अर्पण करें ।

तेरी इस पूजा से संसार कुछ दरिद्री नहीं होता कवि के शब्दों का अर्थ लोग अपनी रुचि के अनुसार लगाते हैं किन्तु उनके वास्तविक अर्थ का लक्ष्य तू ही है ।

हे मेरे जीवन स्वामी ! क्या दिन प्रतिदिन मैं तेरे सन्मुख खड़ा रहूँगा ? हे भुवनेश्वर ! क्या कर जोड़ कर मैं तेरे सन्मुख खड़ा रहूँगा ?

क्या तेरे महान् आकाश के नीचे निर्जन नीरव अवस्था में नम्र हृदय से मैं तेरे सन्मुख खड़ा रहूँगा ।

क्या तेरे इस कर्म ग्रस्त संसार में जो परिश्रम और संग्राम के कोलाहल से आकुल है, दौड़ धूप में लगे हुये लोगों के बीच में रहते हुये मैं तेरे सम्मुख खड़ा रहूँगा ?

हे राजाधिराज ! जब इस संसार में तेरा कार्य समाप्त हो जायगा तो क्या मैं एकान्त और नीरव दशा में तेरे सम्मुख खड़ा रहूँगा ?

मैं तुझे अपना ईश्वर मानता हूँ और इसलिये तुझ से दूर खड़ा रहता हूँ मैं तुझे अपना नहीं समझता और इसलिये तेरे निकटतर आने का साहस नहीं करता । मैं तुझे अपना पिता मानता हूँ और तेरे चरणों में प्रणाम करता हूँ किन्तु मैं तुझे अपना मित्र नहीं समझता और इसलिये तेरा हाथ नहीं पकड़ता ।

जहाँ तू नीचे उतर कर आता है और अपने आपको मेरा बतलाता है वहाँ तुझे अपने हृदय से लगाने और अपना साथी मानने के लिये मैं खड़ा नहीं होता ।

भाइयो ! मैं केवल तुम्हीं को अपना भाई समझता हूँ । मैं उनकी परवाह नहीं करता मैं अपनी कमाई में उनको सम्मिलित नहीं करता और इस प्रकार तुझे भी अपने सर्वस्व में हिस्सा नहीं देता ।

मैं सुख दुःख में उनका साथ नहीं देता और इस प्रकार तेरे पास भी नहीं खड़ा होता । मैं दूसरों के लिये अपना जीवन देने से हिचकिचाता हूँ और

इस प्रकार जीवन महासागर में गोता नहीं लगाता ।

जब जीव तुझे जान जाता है, तब उसके लिये कोई बेगाना नहीं रहता, तब उसके लिये सब द्वार खुल जाते हैं । हे प्रभु ! मुझे यह वर दो कि मैं अनेकत्व के बीच में एकत्व के अनुभवानन्द से कभी वञ्चित न रहूँ ।





आश्रम के उद्देश्य

- १—श्री भगवान् की भक्ति का प्रचार करना ।
- २—गोरक्षा और उसके लिये गोचर भूमि छुड़वाना ।
- ३—जंगलों में वृक्ष लगवाना और उसके बीच जलाशय बनवाना ।
- ४—शिक्षा का प्रचार करना, जिसमें मनुष्य मात्र विद्या-लाभ कर सके और प्राचीन प्रथा को फिर प्रचलित करना ।
- ५—बीमारियों के अवसर पर दवाई बाँटना ।
- ६—आसपास के ग्रामों में परस्पर के झगड़े और वैमनस्य मिटाकर शान्ति और प्रेम बढ़ाना ।
- ७—सब संस्थाओं में भगवद्भक्ति और धर्म का भाव जाग्रत करना ।
- ८—राजा और प्रजा सब ही का हित चिन्तन करना ।

